अध्याय - 6

भाषिक अभिव्यंजना - महादेवी वर्मा एवं रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रहस्यवादी कविताएँ

अध्याय - 6

भाषिक अभिव्यंजना - महादेवी वर्मा एवं रवीन्द्रनाथ ठाकुर की रहस्यवादी कविताएँ

काव्य भाषिक सृजन है। भाषा के विविध रूप होते हैं। दरअसल काव्य भाषा सामान्य भाषा का विशिष्ट रूप है ठीक पानी और लहर की तरह। लहर तो पानी से बनती है। लहर में पानी होता है फिर भी हम लहर को लहर कहते हैं। अर्थात लहर पानी का एक विशिष्ट रूप है। सांख्य दर्शन के माध्यम से डॉ. सियाराम तिवारी का कहना समीचीन है कि "भाषा उपादान कारण है, काव्य कार्य है। भाषा मृत्तिका है, काव्य उससे निर्मित घट है। जिस प्रकार मिट्टी को घड़े का रूप देने के लिए उसे 'बनाया' जाता है, उसको ढाला जाता है उसी प्रकार भाषा को 'बनाकर' ढाल कर काव्य का निर्माण होता है।"[1] अतः स्पष्ट है कि भाषा के भीतर विशिष्ट भाषा ही काव्य भाषा है। अर्थात काव्य भाषा सामान्य भाषा का वह विशेष रूप है, जिससे काव्य बन चुका होता है।

काव्य चित्रवृत्ति का भाषिक रूपायन है तो परिस्थितियों के बदलाव के साथ चितवृत्ति में भी बदलाव आते हैं और परिवर्तित चित्तवृत्तियों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा का पुराना रूप जब अक्षम या असमर्थ हो जाता है तो नए रूप की अपेक्षा होती है। कहने का आशय यह है कि आदिकालीन व मध्यकालीन संत कवियों की रहस्य - साधना की भाषा आधुनिक काल के रवीन्द्रनाथ व महादेवी की रहस्यभावना की अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं बन सकती थी। पंद्रहवीं शताब्दी से लेकर बीसवीं शताब्दी तक की कालावधि में काफी कुछ बदलाव आ चुके होते हैं, शब्द रूप, अलंकार, प्रतीक, बिंब, ध्वनि, रीति आदि प्रत्येक क्षेत्र में। कबीर की वाणी में यही सत्य साकार हो उठा है - "संसकिरत है कूप जल

भाषा बहता नीर।"[2] कबीर की भाषा को कोई सधुक्कड़ी तो सिद्धों और नाथों की सन्ध्या भाषा मानते हैं, किन्तु चाहे बांग्ला के रवीन्द्रनाथ हो या हिंदी की महादेवी दोनों ने ऐसी किसी भाषा का आश्रय नहीं लिया है।

भाव व चिंतन के व्यक्त रूप की सटीकता व सार्थकता प्रयुक्त भाषा पर निर्भर करती है। उपयुक्त भाषा के अभाव में अच्छे भावों व विचारों के बिगड़ जाने की पूरी संभावना रहती है। अतः यहाँ अनुसन्धेय है कि महादेवी वर्मा व रवीन्द्रनाथ अपनी रहस्यवादी कविताओं में भाषिक संरचना के स्तर पर कहाँ तक सफल रहे हैं।

भाषिक अभिव्यंजना : महादेवी वर्मा की रहस्यवादी कविताएँ

काव्य - सृजन का माध्यम है भाषा। भाषा न होती तो काव्य न होता। आधुनिक काव्य के प्रथम आन्दोलन का श्रेय जाता है छायावाद को। छायावाद जितना प्रवृतिगत आन्दोलन था उससे कम भाषायी नहीं था। खड़ी बोली हिंदी का तो जन्म बहुत पहले हो गया था पर यौवन के सौन्दर्य से साक्षात्कार छायावादियों द्वारा हुआ। द्विवेदी युगीन स्थूल भाषाभिव्यक्ति या इतिवृत्तात्मक चित्रण हेतु खड़ी बोली ने शक्ति अर्जित कर ली थी किन्तु सूक्ष्म सौन्दर्यानुभूति को रूपायित करने का ऐतिहासिक कार्य छायावादियों द्वारा सम्पन्न हुआ। छायावाद वास्तव में काव्य भाषा के रूप में खड़ीबोली के संवरने का उत्तम काल था। सच देखा जाये तो पता चलेगा कि छायावाद को काव्यान्दोलन की ऊँचाई तक पहुँचाने का बीड़ा किसी ने उठाया है तो वह है उसकी भाषिक अभिव्यंजना। छायावाद को एक विशेष तरह की भाव पद्धति बनाने में इसके शैली - पक्ष का सर्वाधिक योगदान रहा है।

छायावादी काव्य सृजन में खड़ीबोली के रूप - निर्माण की आवश्यकता को छायावादी कवि न केवल महसूस करते थे बल्कि उसके प्रति वे जागरूक भी थे। सुमित्रानंदन पंत पल्लव की भूमिका में यह उद्घोषणा करते हैं कि, "अब ब्रज भाषा और खड़ीबोली के बीच जीवन - संग्राम का युग बीत गया, उन दिनों मैं साहित्य का ककहरा भी नहीं

जानता था। .....हिंदी ने अब तुतलाना छोड़ दिया, वह प्रिय को प्रिय कहने लगी है। उसका किशोर कंठ फूट गया, अस्फुट अंग कट - छँट गए, ...वह विपुल विस्तृत हो गई, हृदय में नवीन भावनाएँ, नवीन कल्पनाएँ उठने लगीं, ज्ञान की परिधि बढ़ गई। .....वह अज्ञात यौवन कलिका अब विकसित हो गई ...|"[3] जयशंकर प्रसाद अपनी ' काव्य और कला तथा अन्य निबंध ' पुस्तक में संकलित निबन्ध 'यर्थाथवाद और छायावाद' शीर्षक निबंध में संस्कृत साहित्य के माध्यम से लावण्य के सन्दर्भ में 'छाया और विच्छित्ति' की बात करते हैं तो फिर कुंतक की वक्रोक्ति में शब्द और अर्थ की स्वाभाविक वक्रता विच्छित्ति, छाया और कांति के सृजन - प्रसंग पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। अभिव्यंजना की नवीनता के आकांक्षी निराला 'नव गति, नव लय, ताल, छंद नव' पर जोर देते रहे हैं। 'तारकमय नव वेणी - बंधन' लिखनेवाली महादेवी की अभिव्यंजना संबन्धी चमत्कारिता सर्वविदित है।

छायावादी भाषिक अभिव्यंजना पर छायावादोत्तर युग में सर्वाधिक चिंतन हुआ है। साठोतरी धूमिल उर्फ़ सुदामा पाण्डेय का विचार प्रणिधानयोग्य है। 'भाषा की रात' में वे लिखते हैं –

"छायावाद के कवि शब्दों को तोल कर रखते थे,

प्रयोगवाद के कवि शब्दों को टटोल कर रखते थे,

नयी कविता के कवि शब्दों को गोल कर रखते थे,

सन साठ के बाद के कवि शब्दों को खोल कर रखते है"[4]

चुँकि काव्यभाषा विशिष्ट है तो धूमिल का आकलन सही है कि शब्दों को तोल कर रखा जाए। यही कारण है कि आम खड़ीबोली छायावाद में आकर खास साहित्यिक भाषा बनी। प्रसाद की भाषा में विभावरी के बीतते समय की उषा नागरी वाली भाषा है। पंत में प्रथम रश्मि के आने के बाद की भाषा है, निराला में मध्याह्न का तेज है और सच पूछिये तो महादेवी में 'बसंत रजनी' की रहस्य भरी भाषा है। प्रसाद

की भाषा में कुतूहल या उत्सुकता है, पंत में जिज्ञासा, निराला में जागरण तो महादेवी में करुणा के तत्त्व प्रमुख रूप से हैं। रहस्यात्मकता छायावादी कविता की मौलिक भाववस्तु रही है, पर इसकी एकान्तिक साधना में समर्पित रही है महादेवी।

काव्य में रहस्य है एक भावना। भावना है आन्तर वस्तु । रहस्य आरम्भ में रहस्य है और अंत में भी रहस्य है। रहस्य वास्तव में है अनुभूति चीज। निराकार। काव्य में शब्दों द्वारा वह पाता है आकार। शब्दों के उपयुक्त चयन से वह बनता है सार्थक। किसी भी अनुभूतिक चीज की सार्थकता के लिए शब्दों की आवश्यकता होती है। शायद इसीलिए अज्ञेय को लगा था - "काव्य सब से पहले है। और सब से अंत में भी यही बात बच जाती है कि काव्य शब्द है।"[5] संस्कृत आचार्य चाहे विश्वनाथ हो या पंडितराज जगन्नाथ - शब्द पर सिर्फ जोर नहीं देते, शब्द या वाक्य को काव्य मानते हैं, बशर्ते उसके साथ रसात्मकता या फिर रमणीयता का तत्त्व युक्त हो। यानि काव्य शब्द - क्रीड़ा है। रहस्य जैसे सूक्ष्म भावभिव्यन्जना हेतु अनुरूप भाषा अनिवार्य है। स्पष्ट है कि आधुनिक रहस्य - भावना की अभिव्यक्ति में अद्वितीय रही हैं महादेवी वर्मा। अर्थात समूचे आधुनिक हिंदी कवियों में, (सिर्फ छायावादी ही नहीं) किसी के काव्य का प्रधान स्वर रहस्य भावना है तो वह है महादेवी वर्मा और निर्विवाद यह कहा जा सकता है कि यह श्रेय जाता है उनकी भाषिक अभिव्यंजना पद्धति को। यहाँ अनायास मीरा स्मरण हो जाती है। मीरा स्पष्टतः भक्त थी और उनका प्रेम साकार या अवतारी के रूप में प्रसिद्ध कृष्ण के प्रति था। मीरा की आध्यात्मिक साधना यर्थाथ भूमि पर टिकी हुई थी पर महादेवी का प्रियतम अज्ञात था। मीरा में रहस्यात्मकता कुछ हद तक आ गई थी पर महादेवी विशुद्ध रहस्य - साधिका थी। हाँ इसी क्रम में दोनों की विरहाभिव्यंजना में साम्य खोजा जा सकता है जबकि साकार - निराकार की पृथकता यहाँ भी दृष्ट है। कहने का आशय यह है कि मीरा की प्रेम - साधना की वास्तवता असंदिग्ध है जबकि महादेवी की प्रेम - साधना काव्य तक सीमित है। मीरा की यथार्थ धरातल आधारित प्रेम - विरह में पीड़ा, पीड़ा ही है, दर्द देनेवाली किन्तु महादेवी की

विरहजनित पीड़ा उनके लिए वरेण्या रही है। इसलिए प्रसाद के आँसू में जो ज्वाला शीतल होती है महादेवी के लिए अनुरूप ज्वाला मधुर होती है।

महादेवी जी ने एम. ए. की डिग्री संस्कृत में ली हैं। प्राकृत पर अच्छा अधिकार है। अंग्रेजी, बंगला, गुजराती का ज्ञान है। हिंदी की कवयित्री हैं। विषयानुरूप काव्यभाषा की अच्छी पकड़ का होना स्वभाविक है। यह सच है कि महादेवी वर्मा विश्व के प्रत्येक उपादान, प्रकृति व्यापार में सर्वत्र एक विराट सत्ता से साक्षात्कार करती हैं और उसके साथ तादातम्य के लिए व्याकुल हो उठती हैं और यहीं से उसके काव्य में रहस्य भावना का उद्रेक होता है। महादेवी जी स्वयं को प्रकृति का अंग मानती हैं और उस अलौकिक व दिव्य सत्ता से मिलना चाहती है। महादेवी वर्मा की रहस्यानुभूति के समस्त चरण, जैसे कौतुहल, जिज्ञासा, सुषमा के दर्शन में अनुभूति हो जाना, मिलन, विरह आदि की अभिव्यंजना उपयुक्त भाषा शैली में हुई है।

शब्द चयन : रहस्याभिव्यंजना के सन्दर्भ में शब्दों को तोलकर रखने की परिपाटी महादेवी के काव्य में सर्वत्र व्याप्त है। उनके काव्य में संवेदना के विस्तार की ताकत उनका उपयुक्त शब्द - चयन है, जिससे यह प्रभावित होता है कि भाषा पर महादेवी का सहज अधिकार था। जैसे आत्मा अपने शरीर के माध्यम से गुणों को व्यक्त करती हैं वैसे ही रचनाकार की आतंरिक अनुभूति रचना - विधान के विभिन्न साधनों के माध्यम से अभिव्यंजित होती है। महादेवी इस सन्दर्भ में सिद्धहस्त थी।

रहस्यमूलक शब्द : महादेवी के काव्य के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि कुछ ख़ास शब्दों का महादेवी ने अपने काव्य में प्रयोग किया है जिससे रहस्य का भाव अधिक व्यंजित हो रहे हैं।

उदाहरण : दीपक, अँधेरा, निर्वाण, मुस्कान, अस्फुट, अनंत, प्रतिबिंबित, अन्तर्धान, मूक, सीमाहीन, अस्थिर, निशा, बिछलन, तिमिर, संध्या, स्वप्नलोक, अज्ञात, बेसुध, शून्य, चपला, छाया, झंकार, आँखमिचौनी, तूफान, चितवन, रजनी, सूनापन, दिव्य, घटा, उच्छवास, रैन, निर्झर,

नीरव, झंझा, उन्माद, मोहक, निस्पंद, थिरकन, कम्पन, अलक्षित, मोह - मदिरा, अन्तर्धान, क्षणभंगुर, वेदना, मौन, महानिद्रा, किलक, निर्मोही, मेघ - पुंज (नीहार), सौरभ, अथाह, अजान, विहान, संसृति, रुपहली, सीप, पारावार, नींद, स्वप्न्शाला, उलझन, धड़कन, अभिराम, किसलय, पतझर, समीरण, आलिंगन, छायाजग, तुम, तेरी, पदध्वनि, मरकत - प्याली, ह्रत्कम्पन, आभा, बादल, गंभीरता, अणुमय, पलकें, निर्झर, मुकुर (रश्मि), तारकमय, मुक्ताहल, नूपुर - ध्वनि . स्मित, शेफाली, मौलश्री, मृदुल, सुमन, पाश, अश्रु, कुलहीन, आसक्ति, विस्मृति, शलभ, सुनहली, स्वर्ण - फूल, अमिट, विद्युत, छायापथ, नीलम, प्रिय, अवगुंठन, दर्पण, झिल - मिल,, परिमल, पावसमास, प्राणपिक, सजल, उत्पल, शूलमय, सजनि, सुहाग, परिणय, सुमन (नीरजा), रात, फूल, मदिर, रागभीनी, नीलमरज, सिन्धु, चाँदनी, सुधि, गुंजन, लोचन, रशना, बयार, क्षितिज, लोल, आगार, विरह, बदली, निर्झरणी, स्वप्न - पराग, आनन, साँझ, विकल, मृदुल आदि (सांध्यगीत)।

सिर्फ शब्दों का चयन ही नहीं प्रयोग - कौशल अभिलषित अभिव्यंजना का क्षेत्र - निर्माण करता हैं –

- **फैलाती तम में रहस्य पर / आलिंगन का पाश।**[6] (रश्मि)
- **"पीत पल्लवों में सुन तेरी / पदध्वनि उठती जाग।**[7] (रश्मि)
- **"कौन जाने है बसा उस पार / तम या रागमय दिन।**[8]

(सांध्यगीत)

- **"तुम को पीड़ा में ढूँढा / तुम में ढूँढूँगी पीड़ा को।**[9] (नीहार)

शब्दों के सटीक प्रयोग से अभिव्यंजना द्वारा संवेदना के विस्तार का निम्न उदाहरण दृष्टव्य हैं –

- **बिछाती थी सपनों के जाल / तुम्हारी वह करुणा की कोर।**[10]

(नीहार)

- **तारों में प्रतिबिंबित हो / मुस्कायेंगी अनन्त आँखे।**[11] (नीहार)
- **संसृति के सूने पृष्ठों में करुणा काव्य का लिख जाता।**[12] (रश्मि)
- **झुक सस्मित शीतल चुम्बन से / अंकित कर उसका मृदु भाल।**[13]

(नीरजा)

महादेवी के काव्य में एक बार आने वाले की संख्या सर्वाधिक, पर कुछ ऐसे शब्द हैं जो जगदीश गुप्त के अनुसार आवृतिमूलक सरणी में प्रयुक्त हैं; जैसे - पीड़ा, वेदना, व्यथा, प्राण, जीवन, सपना, स्वपन, आँसू, अश्रु, अनंत, असीम, सीमाहीन, मूक, मौन, चुपचाप, दीप, दीपक,, तम, अंधकार, तिमिर, अँधेरा, रुदन, रोदन, वीणा, बीन, संगीत, गान, नैराश्य, निराशा, विषाद, अवसाद, मृदु, मृदुल, ढूँढना, खोजना आदि। क्रियाओं में मुस्काना, खोना, मिटना, खेलना, जलना, बूझना, रोना, भूलना आदि का सर्वाधिक प्रयोग है। 'मिटना' और 'जलना' के कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं –

<u>मिटना क्रिया का प्रयोग –</u>

- **"जिसने जाना नहीं मिटने का स्वाद।"**[14] (नीहार)
- **"यह मेरा मिटने का अधिकार।"**[15] (नीहार)
- **"छोटी सीमा में अपना अस्तित्व मिटा दो।"**[16] (नीहार)
- **"करता है पल - पल में देखो /मिटने का स्वाभिमान।"**[17]

(रश्मि)

- **"नहीं उसको विराम विश्राम / एक बनने मिटने का काम।"**[18]

(रश्मि)

- **"जाती है असीम होने मिटकर असीम के पास।"**[19] (रश्मि)

- **"मिटनेवालों की हे निष्ठुर।"[20]** (नीरजा)
- **"मधुर मिलन में मिट जाना तू।"[21]** (नीरजा)
- **"मिटता लघु पल प्रिय देखो।"[22]** (नीरजा)
- **"परिचय इतना इतिहास यही उमड़ी कल थी मिट आज चली।"[23]**

(सांध्यगीत)

<u>जलना क्रिया का प्रयोग –</u>

- **"जलना जाना नहीं, नहीं जाना मिटने का स्वाद।"[24]** (नीहार)
- **"चल चपला के दीप जला कर।"[25]** (नीहार)
- **"जलना ही रहस्य है बुझना - / है नैसर्गिक बात।"[26]**

(रश्मि)

- **"स्नेह भरा जलता है झिलमिल मेरा दीपक - मन रे।"[27]**

(नीरजा)

- **"मधुर - मधुर मेरे दीपक जल।"[28]** (नीरजा)
- **"तू जल जल जितना होता क्षय।"[29]** (नीरजा)

नैन, हठीले, दुलरा, बहला, पाँत, कन, पपीहा, बयार, हौले जैसे कुछ पुरानी काव्य परंपरा के शब्द महादेवी के कवी में अनायास आ गए हैं। जगदीश गुप्त जी कुछ शब्द - व्यतिरेक की ओर ध्यान आकृष्ट करते हैं, जैसे - सुख - दुख, शाप - वरदान, मुक्ति - बन्धन, अभाव - तृप्ति, तिमिर - आलोक, ज्वाला - घनसार, प्रकाश - तम, मिलन - विरह, जलना - बुझना, आँसू - स्थिति, सीमित - असीम, हार - जीत, जय - पराजय, प्रलय - संसृति, उत्थान - पतन, वसंत - पतझर, रोदन - किलकन,

मुखर - मौन, उषा - छाया, हास - रुदन, अश्रु - हास .....|[30] व्यतिरेकी शब्द प्रयोजन से द्वंद्वात्मकता को प्रश्रय मिलता है और इससे रहस्य व्यंजना की गुंजाइश बढ़ जाती है। निम्नांकित उदहारण दृष्टव्य हैं –

1. **"मैं मिटी निस्सीम प्रिय में,**
   वह गया वँध - लघु हृदय में,
   अब विरह की रात को तू
   चिर मिलन का प्रात रे कह !"[31]

(नीरजा, गीत संख्या-47)

2. **"मत्त मयूरों ने सुने में,**
   झड़ियाँ का दुहराया नर्तन !
   लाये कोण सन्देश नए घन !
   सुख दुख से भर
   आया लघु उर,
   मोती से भरे जलकण से
   छाये मेरे विस्मित लोचन !
   लाये कौन सन्देश नये घन" ![32]

(नीरजा, गीत संख्या-43)

सम्पूर्ण छायावाद में महादेवी एकमात्र कवयित्री है जिनके काव्य में सर्वाधिक शब्दावली कोमलता, मृदुता, संगीतिकता, लयात्मकता, मधुरता के गुणों से युक्त है। इसीलिए इनका रहस्यवादी चिंतन अधिक आकर्षक बन सका है। इनका शब्द विलास - भावविलास का पर्याय बनकर जीवन दर्शन को गूढ बना सका है।

अभिव्यंजना की प्रसाधन सामग्री के रूप में आलंकारिकता, बिम्ब - योजना, प्रतीकात्मकता, छंद - विन्यास आदि का महत्वपूर्ण

स्थान है। ये ही चीजे सौन्दर्य तथा रसात्मकता से मंडित करती है। महादेवी की रहस्यवादी कविताओं में इनकी भूमिकाओं को स्पष्ट करना अपेक्षित है।

<u>आलंकारिकता -</u> संस्कृत आचार्यों ने अलंकार को काफी महत्त्व दिया है। यह काव्य का बहिरंग तत्त्व है। अग्निपुराणकार, दंडी, वामन, आनंदवर्धन, राजशेखर, क्षेमेन्द्र, हेमचन्द्र आदि ने काव्य में अलंकार की आवश्यकता पर जोर दिया है। अलंकरण वृत्ति को हिंदी के आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल तथा आधुनिककाल में भी कुछ हेर - फेर के साथ महत्त्व मिलता रहा। छायावाद में भी परम्परित अलंकारों के साथ मानवीकरण, विशेषण, विपर्यय जैसे नए अलंकार भी जुड गए। अलंकार प्रयोग के सन्दर्भ महादेवी अपवाद नहीं हैं पर अलंकार इनका साध्य नहीं था इतना निश्चित है। महादेवी अलंकारिक कवयित्री नहीं थी। इसलिए महादेवी अलंकार को बाह्य शोभावर्धन हेतु कम आतंरिक सौन्दर्य उदघाटन के लिए अधिक स्वीकार करती हैं। उपमा, रूपक, अनुप्रास, उत्प्रेक्षा, विरोधाभास आदि परंपरित व प्राचीन अलंकार के साथ, पाश्चात्य के प्रभाव से अपनाये गए तीन नए अलंकार - 1. मानवीकरण, 2. विशेषण विपर्यय, 3. ध्वन्यार्थव्यंजना का भी प्रयोग महादेवी ने किया है।

1. **<u>रूपक :</u>** निम्न पक्तियों में रूपक के माध्यम से रहस्य की उद्भावना दर्शनीय है –

   - **"प्रिय ! सांध्य गगन, मेरा जीवन" !**[33]

     (सांध्यगीत, गीत संख्या - 1)
   - **"मैं नीर भरी दुख की बदली !"**[34]

     (सांध्यगीत, गीत संख्या - 21)
   - **"विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !"**[35]

(नीरजा,गीत संख्या - 9)

2. <u>अन्योक्ति :</u> **"कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो।"[36]**

(सांध्य गीत, गीत सं - 29)

3. <u>मानवीकरण :</u>

- **"चाँदनी मेरी अमा का भेंट कर अभिषेक करती।"[37]**

(सांध्य गीत)

- **"हँस कर तब उस पार तिमिर का कहता बढ़ बढ़ पारावार।"[38]** (नीहार)
- **"आँसू बन बन तारक आते / सुमन हृदय में सेज बिछाते कम्पित बानीरों के वन भी,/ रह रह करुण विहाग सुनाते।"[39]** (नीरजा)
- **"निशा को धो देता राकेश / चाँदनी में जब अलके खोल।"[40]**

(नीहार)

4. <u>विशेषण विपर्यय :</u>

- **"झुक सस्मित शीतल चुम्बन से।"[41]** (नीरजा)
- **"फूलों पर नीरव रजनी के / शून्य पलों के भार।"[42]**

(रश्मि)

- **"जहाँ के निर्झर नीरव गान।"[43]** (नीरजा)

5. <u>पुनरुक्ति और अनुप्रास :</u>

- **"रूपसी तेरा घन - केश - पाश।**

श्यामल श्यामल कोमल कोमल,

लहराता सुरभित केश - पाश।"[44] (नीरजा)

6. **<u>यमक :</u>** **"जगती जगती की मूक प्यास।"[45]** (नीरजा)

7. **<u>ध्वनयर्थ व्यंजना :</u>**

- **"झुक झुक झूम झूम कर लहरें, / भारती बूंदों के मोती।"[46]** (नीहार)
- **"बहते कन कन से फूट फूट; / मधु निर्झर से सजल गान !"[47]** (रश्मि)
- **"पुलक पुलक उर,सिहर सिहर तन,/ आज नयन आते क्यों भर भर ?"[48]** (नीरजा)

8. **<u>उपमा :</u>**

- **"कुहरे का संसार।"[49]** (रश्मि)
- **"मृत्यु का प्रस्तर - सा उर चीर।"[50]** (रश्मि)

9. **<u>समासोक्ति :</u>**

"सजनि मैंने स्वर्णपिंजर में प्रलय का बात पाला।"[51]

(सांध्य गीत)

<u>नवीन छंदों का आग्रह -</u> विश्व - प्रकृति की छन्दोमयता इसकी खास पहचान है। सृजन से लेकर प्रलय तक सब छंद युक्त हैं। काव्य में वर्ण, मात्रा, गति, यति, लय आदि नियमबद्धता का नाम ही छंद है। पर यह कोई स्थिर वस्तु नहीं है। इसका अतिक्रमण होता रहता है। प्रसंगानुकूल इसके स्वरूप में परिवर्तन होता आया है। छायावाद में नवीनता के प्रति प्रबल आग्रह रहा है। हर चीज में, चाहे वस्तु हो या शिल्प - बन्धन - मुक्ति की आकांक्षा इसकी (छायावाद की) एक खास प्रवृति रही है। निराला ने मुक्त - छंद का अविष्कार कर ही दिया था। कुल मिलाकर छायावाद ने तुकांत, अतुकांत, अर्द्ध तुकांत, दीर्घ तुकांत, आदि का स्वाधीन रूप से

प्रयोग कर छंद के क्षेत्र में नवीन उद्भावना को प्रस्तुत कर दिया था। छंदों में संगीतात्मकता या गेयता हो या न हो पर लय, तान, क्रम आदि की उपेक्षा नहीं थी। रहस्य - साधिका महादेवी ने अपनी भावनाओं के अनुकूल अधिकांशतः संगीतमय तुकांत का प्रयोग किया है। इसलिए इनके छंदों में गेयात्मकता का सहज समावेश हो गया है। विरह तथा रहस्य भाव की अभिव्यक्ति में संगीतिकता वांछनीय होती है। इसमें आरोह अवरोह की योजना होती है। नादात्मक सौन्दर्य के साथ माधुर्य हिलोरें भरती हैं। छायावादियों के लिए मध्ययुगीन छंदों में रोला, रूपमाला, सखी, राधिका, पीयूषर्ण, अरिल्ल, प्लवंगम आदि अपनी भावाभिव्यन्जना के अधिक अनुकूल पड़ते थे। प्रसाद ने 'आँसू' में 'सखी' छंद का सफल प्रयोग किया है। महादेवी ने इसका प्रयोग 'नीहार' और 'रशिम' की कुछ कविताओं में किया है। लावनी और वीर (आल्हा) का भी महादेवी प्रयोग में लाई हैं। सार या ललित का भी उन्होंने प्रयोग किया है। इस छंद के प्रत्येक चरण में 28 मात्राएँ होती हैं। 16 और 12 मात्राओं पर विराम होता है। अंत में दो गुरु होते हैं। उदाहरण –

"उमरता मेरे दृगों में वरसता घनश्याम में जो, = 28
आधार में मेरे खिला नव इन्द्रधनु अभिराम में जो"[52] = 28
(सांध्य गीत)

नामवर जी का आकलन दृष्टव्य है कि, महादेवी ने सोलह मात्राओंवाले चरण के एक गीत को अपनाकर उसके एक चरण को टेक और उसके विगुणित रूप को अंतरा बनाकर बहुत से गीत लिखे, जो हिंदी में काफी लोकप्रिय हुए।.....उदाहरण के लिए यह गीत –

"**कौन तुम मेरे हृदय में**
कौन मेरी कसक में नित मधुरता भरता अलक्षित ?

कौन प्याले लोचन में घुमड़ घिर झरता अलक्षित ?
स्वर्ण - स्वप्न का चितेरा नींद के सुने निलय में ?
कौन तुम मेरे हृदय में।"[53]

छंद प्रयोग के सन्दर्भ में भावावेग की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भावावेग के आधार पर आवश्यकतानुसार महादेवी ने छंद - संस्कार भी किये हैं - इसमें संदेह नहीं। भावों की दृष्टि से आरोह - अवरोह की योजना की गई है। इससे रहस्य भाव वाली कविताओं में नवीन प्राणों का संचार हुआ है। महादेवी ने नवीन और प्राचीन का सामंजस्य कर भाव प्रवणता व संगीत की अभिवृद्धि के लिए छंदों का चयन किया है। छंद के मामले में महादेवी ने स्वछंदतावादी दृष्टि अपनायी है इससे उनकी रहस्याभिव्यन्जना में निखार आया है।

<u>प्रतीकात्मकता -</u> प्रतीक - प्रयोग प्राचीन है। हिंदी साहित्यकोश के अनुसार, "प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय या प्रतिविधान उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है।"[54] इसमें कवि के सूक्ष्मतम भाव की अभिव्यंजना ठीक से हो पाती है। यह एक प्रकार संकेतिक भाषा है। महादेवी ने बड़े सहज ढंग से प्रतीकों का प्रयोग किया है जिससे विशेष कर उनके रहस्यवादी अभिव्यंजना में चार चाँद लग गये हैं। महादेवी के प्रतीक निरूपण को ध्यान से देखने पर चार तरह के प्रतीक मिलेंगे, जैसे –

1. **<u>मूर्त के लिये मूर्त प्रतीक –</u>**

"तेरे असीम आँगन की
देखूं जगमग दीवाली,
या इस निर्जन कोने के,

बुझते दीपक को देखूं !"[55]

इसमें मूर्त विषय के लिए मूर्त प्रतीक आया है। साधनाशील मन के लिए दीपक प्रतीक का प्रयोग होता है पर यहाँ मूर्त प्रतीक का प्रयोग मनुष्य शिशु के लिये किया गया है जो स्वयं मूर्त यानी प्रस्तुत विषय है।

2. <u>अमूर्त के लिए अमूर्त प्रतीक</u> –

"मैं अनंत पथ में लिखती जो,
सस्मित सपनों की बातें।
उनको कभी न धो पाएँगी
अपने आँसू से रातें।"[56] (नीहार, गीत सं - 4)

यहाँ 'स्वप्नों' का प्रतीक अतीत की सुख की अनुभूतियों के लिए है तो 'रातें' दुख की अनुभूति है। अमूर्त के लिए अमूर्त प्रतीक है।

3. <u>मूर्त के लिए अमूर्त प्रतीक -</u> ऐसे प्रतीक विधान दुष्कर है, असामान्य है फिर भी महादेवी ने इसमें दक्षता का परिचय दिया है।

- **किस मलय सुरभित अंक रहा। आया विदेशी गंधवह ?**
  यहाँ गंधवह (वायु) का प्रयोग हरजाई प्रियतम के लिए हुआ।

- **"मैं तुमसे हूँ एक, एक हैं ,**
  जैसे रशिम - प्रकाश।"[57]
  यहाँ रश्मि और प्रकाश - अमूर्त । प्रतीक साधिका और साध्य के लिए हैं।

- **कलियों की घन जाली में / छिपती देखूँ लतिकाएँ /**
  या दुर्दिन के हाथों में / लज्जा की करुणा देखूँ।

यहाँ अमूर्त प्रतीक है। लज्जा जिसका प्रयोग मूर्त अबला सी के लिए किया गया है।

4. **अमूर्त के लिए मूर्त प्रयोग -** महादेवी वर्मा की कविताओं में अमूर्त यानी सूक्ष्म के लिए मूर्त यानी स्थूल प्रतीक का सर्वाधिक प्रयोग देखने को मिलता हैं।

- **"शलभ मैं शापमय वर हूँ ?**
  किसी का दीप निष्ठुर हूँ !"[58]
  यहाँ दीप (मूर्त) वेदना अमूर्त (सूक्ष्म) के लिए प्रयुक्त प्रतीक है।

- **"बिखर बिखर मेरे दीपक जल !"**[59]
  यहाँ बिखर मूर्त (स्थूल) दीपक अमूर्त (सूक्ष्म) जीवन के लिए किया गया है।

- **कण - कण में रच अभिनव बंधन,**
  क्षण - क्षण को कर भ्रममय उलझन
  पथ में बिखरा शूल
  बुला जाते हो दूर अकेले।
  यहाँ शूल (मूर्त) अमूर्त (सूक्ष्म) कष्ट का प्रतीक है।

- **"पलकों में निर्झरणी मचली।"**[60]
  निर्झरणी मूर्त अमूर्त आँसू के लिए प्रयुक्त है।
  कुछ ऐसे प्रतीक हैं जो महादेवी की सूक्ष्म भावना को व्यक्त करने के लिए इतने अनुकूल लगते हैं कि उन्होंने उनका बार - बार प्रयोग किया हैं और कई बार अलग - अलग अर्थों में किया हैं। कुछ उदाहरण अवलोकनीय हैं –

<u>दीपक -</u> कभी जीवन, कभी एकांत साधना, कभी एकाग्रता, कभी आत्मोत्सर्ग, कभी समाधि, कभी अज्ञात प्रियतम, कभी कष्ट सहन करने - आदि विविध अर्थों में प्रयुक्त हुआ हैं।

<u>दर्पण -</u> माया के प्रतीक के रूप में हुआ है।

"तोड़ देता खीझ कर जब तक न प्रिय यह मृदुल दर्पण।"[61]

<u>शलभ -</u> महादेवी का प्रिय प्रतीक हैं। कभी मूढ जीव के रूप में तो कभी आदर्श प्रेमी के रूप में किया हैं। उदाहरण –

- **विश्व - शलभ सिर धुन कहता 'मैं / हाय न ल पाया तुझ में मिल**
- **'क्यों जग कहता मतवाली ?/ क्यों न शलभ लुट - लुट जाऊँ**

<u>कमल -</u> इस प्रतीक से महदेवी का बहुत लगाव है। एक कृति का नामकरण तो उन्होंने 'नीरजा' किया हैं। कभी जीवन के प्रतीक के रूप में तो कभी एक लज्जाशील नारी की विविध स्थितियों के प्रतीक के रूप में इसका प्रयोग किया गया है।

- **विरह का जलजात**
- **इसमें उपजा यह नीरज स्थित / कोमल - कोमल लज्जित मिलित।**

<u>शूल और झंझा -</u> साधना का मार्ग आसान नहीं हैं। मार्ग में आनेवाली प्रतिकूल स्थितियों, बाधाओं के प्रतीक के रूप में महादेवी ने इन दोनों का प्रयोग किया है –

- **अन्य होंगे चरण हारे / हैं लौटते, दे शूल को संकल्प सारे।**
- **ढूंढती झंझा मुझसे लें।**

- **टूटी है कभी तेरी समाधि, / झंझा लौटे शत हार - हार**

<u>यात्री -</u> महादेवी ने 'यात्री' का प्रयोग कभी पथिक तो कभी नाविक के प्रतीक के रूप में किया है –

- **पंथ होने दो अपरिचित प्राण रहने दो अकेला**
- **अग्नि पंथी मैं तुम्हे दूँ / कौन सा प्रतिदान**
- **तरी को ले जाओ मझधार / डूब कर हो जाओगे पार**
- **युग युग का पंथी आकुल मन**

<u>स्वप्न -</u> विगत की अनुभूतियों या फिर मधुर भाव के प्रतीक के रूप में स्वप्न का प्रयोग हुआ है –

- **अपने जर्जर अंचल में / भर भर सपनों की माया**
- **उड़ा तू छंद बरसाता / चला मन स्वप्न बिखराता**
- **मैं अनंत पथ में लिखती जो / सस्मित सपनों की बातें**

<u>सौरभ -</u> मिलन की स्मृति तथा अनुकूल भाव के लिए 'सौरभ' का प्रतीकात्मक प्रयोग कई बार हुआ हैं –

- **मेरे विरक्त अंचल में / सौरभ समीर भर जाती**

- **मैं पलकों में पाल रहीं हूँ**
  यह सपना सुकुमार किसी का
  लाया झंझा - दूत सुरभिमय
  साँसों का उपहार किसी का

भावों की अभिव्यंजना में प्रतीकों का सटीक चयन और प्रयोग का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं। महादेवी की रहस्यभावना को सार्थक एवं सुन्दर बनाने में इन प्रतीकों का सम्पूर्ण छायावाद में विशिष्ट स्थान है।

<u>बिम्ब - विधान :</u> बिम्ब एक प्रकार भाषिक चित्रीकरण है। बच्चन सिंह के अनुसार - "किसी भाव, विचार, वस्तु, घटना आदि का इंद्रिय संवेद्य काल्पनिक शब्दबद्ध समूर्तन काव्य - बिम्ब है।"[62] यह भी कहा जाता है कि बार बार प्रयुक्त होने पर बिम्ब प्रतीक बन जाते है। मिथ में कथा तत्त्व अनिवार्यतः होता है, किन्तु प्रतीक व बिम्ब में नहीं। वस्तुतः मनुष्य के मन में प्रत्यक्ष - अप्रत्यक्ष रूप से बहुत सारे भाव - व्यापार कार्यरत रहते हैं और उन्हें मूर्त रूप देकर इंद्रिय गोचर बनाना ही बिम्बिकरण है। सादृश्य कथन के कारण लोग अलंकार जैसे रूपक, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि में अथवा लक्षण - व्यंजना आदि से भी बिम्ब - निर्माण की बात करते है, पर बच्चन जी मानते हैं कि, ".....बिम्ब में जो विस्तार और वैविध्य होता है वह न सादृश्यमूलक अलंकार में होता है न लक्षणा - व्यंजना में।"[63] शुक्लजी इसे रूपविधान कहते हैं और इसके तीन प्रकार बताते हैं — प्रत्यक्ष रूप-विधान, स्मृति रूप-विधान, और कल्पित रूप-विधान | काव्य में रूप विधान मूलतः कल्पित हुआ करता है। चूँकि बिम्ब या रूपकल्प इंद्रिय - गोचर है तो इसके दृश्य, श्राव्य, घ्राण आदि रूप हो जाते है। महादेवी वर्मा के काव्य में जहाँ तक रहस्याभिव्यन्जना के साथ बिम्ब का सम्बद्ध है, उन्होंने बिम्ब के सारे भेदों का प्रयोग इसके लिए किया है। दरअसल रहस्य लोक सृजन में महादेवी के बिम्ब (चित्ररूप) काम आये हैं। स्वप्न, संध्या, वसंत, रजनी, सांध्य गगन, झिलमिलाती रात, नीरभरी बदली, दृगों के कंज - कोष, सुधि - विहान, बादलों की मृदु तरी, आलोक, सतरंगी पुलिन सा, सुनहली, साँझ, स्वर्ण रश्मि, हँसते बिहान, मदिरा छलछल, स्मित इंद्रधनुष, जुगनू के स्वर्ण - फूल, वक - पाँतों का अरविन्द हार, स्मित का प्रात, पिक की मधुमय वंशी, दृग - इन्द्रीवर, तारक बाला, छाया का कारागार, झंझा का शैशव - आदि जहाँ देखेंगे वहाँ बिम्ब, अनगिनत विम्ब। वास्तव में महादेवी के काव्य में

बिम्बों की फुलवारी है, जहाँ तरह - तरह के रंगीन फूल देखने को मिलेंगे, बिम्बों का सागर है जहाँ वेदना की अनन्त लहरें दृश्य होंगी, बिम्बों का आकाश भी है असंख्य तारे झिलमिलाते रहते हैं। उनकी बिम्ब योजना का एक गहरा और विशाल क्षेत्र है जो आधुनिक छायावादी काव्य के लिए नहीं सम्पूर्ण वाङमय में विरल है और सब से बड़ी बात यह है कि अधिकांश में रहस्य का रंग है। कतिपय उदहारण उल्लेख्य हैं।

<u>वर्ण - परिज्ञानमूलक बिम्ब :</u> महादेवी का वर्ण - परिज्ञान उनके विम्ब - विधान का सबसे बड़ा वैशिष्टय है। जैसे –

- **"देखूँ हिम - हीरक हँसते,**
  हिलते नील कमलों पर।"[64] (रश्मि)
  इसमें एक सुन्दर, प्रसन्न वदन का अनोखा विम्ब प्रस्तुत है।

- **"हँस देता जब प्रात, सुनहले**
  अंचल में बिखरा रोली,
  लहरों की बिछलन पर जब
  मचली पड़ती किरणें भोली।"[65] (नीहार)
  प्रात का आकर्षक चित्र।

<u>व्यापार विधायक बिम्ब :</u> महादेवी ने व्यापार - विधायक बिम्बों का अधिक संयोजन किया है।
पूजा व्यापार का यह चित्र कितना मार्मिक है –

- **"स्नेह भरा जलता है झिलमिल मेरा यह दीपक-मन रे !**
  मेरे दृग के तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे !"[66]
  (नीरजा)

विरह की वेदना और बेचैनी के व्यापार वाला चित्र बड़ा ही आकर्षक है –

- **मोम सा तन घुल चुका, अब दीप सा मन जल चुका है।**

<u>बिम्बों की विराट कल्पना :</u> छायावादियों में बिम्बों की विराट कल्पना में महादेवी अद्वितीय हैं और जाहिर है जहाँ विराटता होगी वहीं रहस्यात्मकता की विद्यमानता रहेगी। निम्नांकित उदाहरण अवलोकनीय हैं –

"अवनि अम्बर की रुपहली सीप में ,
तरल मोती सा जलधि जब काँपता ,
तैरते घन मृदुल हिम के पुंज से ,
ज्योत्स्ना के रजत पारावार में।"[67]

यहाँ अवनि और अम्बर मिलकर एक सीपी बने हैं और उस सीपी में अनंत पारावार के तरल मोती की स्थापना - विराट कल्पना की ही सबूत है।

<u>ध्वनि बिम्ब :</u> महादेवी के ध्वनि बिम्ब या श्रव्य बिम्ब का श्रेष्ठ उदहारण प्रस्तुत है –

"मर्मर की सुमधुर नुपुर - ध्वनि,
अलि - गुंजित पद्यों की किंकिणि,
भर पद - गति में अलस तरंगिणी
तरल रजत की धार बहा दे।"[68] (नीरजा)

<u>रूप बिम्ब :</u> महादेवी के काव्य में रूप बिम्ब का प्रयोग बाहुल्य है पर उसकी सूक्ष्म कल्पना के साथ। उदाहरण –

"रवि - शशि तेरे अवतंस लोल,
सीमंत - जटित तारक अमोल;
चपला विभ्रम, स्मित इन्द्रधनुष,

हिमकण बन झरते स्वेद निकर !

अप्सरि तेरा नर्तन सुन्दर।"[69] (नीरजा)

<u>स्मृति बिम्ब :</u> इसमें अतीत की याद चित्रवत ताजी हो जाती हैं –

"कौन आया था न जाने

स्वपन में मुझको जगाने;

याद में उन उँगलियों के

है मुझ पर युग बिताने।"[70] (सांध्य गीत)

महादेवी के काव्य में बिम्ब का साम्राज्य है। अपने अज्ञात प्रियतम के आगमन को आवरणयुक्त बनाकर रहस्यमय बनानेवाला यह चित्र देखते ही बनता है –

"रजत रश्मियों की छाया में धूमिल घन सा वह आता।"[71]

(रश्मि)

महादेवी की बिम्ब - योजना सक्रिय बौद्धिकता, उर्वर अनुभूतिशीलता का मणिकांचन संयोग है।

<u>शैलीगत वैशिष्ट्य :</u> अभिव्यंजना शैली की विविध पक्षों का अनुशीलन किया गया। शेष कतिपय बिंदु पर चर्चा अपेक्षित है।

सम्पूर्ण छायावाद वैयक्तिक अनुभव की अभिव्यक्ति हैं। निराला ने 'अधिवास' कविता में स्पष्ट कर दिया है कि 'मैंने मैं शैली अपनाई।' यह मैं शैली निराला अकेले नहीं सारे कवियों ने अपनाई है। महादेवी वर्मा भी इस शैली की कायल रही हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं –

- **मैं नीर भरी दुख की बदली !**
- **मुझमें हो तो आज तुम्ही 'मैं'**
- **मैं किसी की मूक छाया**

- **शलभ मैं शापमय वर हूँ**
- **शून्य मंदिर में बनूँगी आज मैं प्रतिमा तुम्हारी**
- **मैं अनंत पथ में लिखती जो**
- **बीन भी हूँ मैं तुम्हारी रागिनी भी हूँ**

इस 'मैं' के सारे कृत्य 'तुम' के लिए है। 'मैं' दृश्य है 'तुम' अज्ञात, अदृश्य। इस 'मैं' की 'तुम' के प्रति जिज्ञासा में रहस्य जन्म लेता है।

इस 'मैं' 'तुम' का यह विशाल विश्व गीतिमय है जिसमें वैयक्तिकता, संक्षिप्तता, स्वानुभूतिमयता, भावान्विति, कोमलता, तारल्य, माधुर्य - यानी प्रगीत - शैली के समस्ततत्त्व सुन्दर ढंग से सन्निविष्ट हैं।

भाषिक अभिव्यंजना की दृष्टि से महादेवी की रहस्यवादी कविताएँ उत्कृष्ट कोटि की हैं। शब्द - चयन, वाक्य - विन्यास, अपस्तुत योजना (आलंकारिकता), बिम्ब, प्रतीक -निर्माण एवं शैली - सृजन आदि की दृष्टि से महादेवी वर्मा की नवोन्मेषशालिनी काव्य - प्रतिभा के युगांतकारी निर्देशन हैं उनकी रहस्यवादी कविताएँ। ऐसा लगता हैं यहाँ रहस्यवाद स्वयं एक अभिव्यंजना शैली के रूप में प्रस्तुत हो गया है।

<u>भाषिक अभिव्यंजना : रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी कविताएँ</u>

और कवि कवि हैं पर रवीन्द्रनाथ विश्व कवि हैं। और कवि कवि हैं पर रवीन्द्रनाथ कविगुरु हैं। कहा जाता है कि, आधुनिक भारतीय साहित्य प्राच्य और पाश्चात्य के मिलन का अमृतमय फल है। भारत में आधुनिकता और आधुनिक नव जागरण का जो विस्तार हुआ था,उसका माध्यम तो अंग्रेजी भाषा थी ही पर बंगला की कम भूमिका नहीं थी। मध्यकाल में हिंदी के प्रभाव से बंग प्रदेश में 'ब्रजबुली' में साहित्य लिखा जा रहा था। कलकत्ता में फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना के बाद विद्यासागर के समय बंग्ला - हिंदी का आदान - प्रदान शुरू हो गया था।

हिंदी के आधुनिक साहित्य के जनक भारतेंदु विद्यासागर के संपर्क में आये थे। उस समय से बंग साहित्य का हिंदी में अनुवाद शुरू हो गया था। रवीन्द्रनाथ को 1913 में नोबल पुरस्कार प्राप्त होने के बाद बंग भाषा का प्रभाव बढ़ गया था। यह उललेखनीय है की स्वयं रवीन्द्रनाथ शांतिनिकेतन के विद्वान प्रवर आचार्य क्षितिमोहन सेन की हिंदी के प्राचीन संत कवि दादूदयाल, कबीर के काव्य का परिचय प्राप्त किया था। कबीर का काव्य उनके लिए इतना प्रभावशाली था कि उन्होंने उनके एक सौ पदों का अनुवाद 'One Hundred Poems of Kabir' नाम से किया था। और तो और स्वयं रवीन्द्रनाथ ने 'भानुसिंहेर पदावली' की रचना हिंदी (ब्रजबुली) में की थी। यह कहना अत्युक्ति नहीं होगा की रवीन्द्रनाथ पर रहस्यवादी दर्शन का प्रभाव कहीं न कहीं दादू, कबीर के माध्यम से पड़ा होगा।

जाहिर है कि साधारण भाव के चित्रण की भाषा भिन्न होती है और रहस्यवादी दर्शन - चिंतन की भाषा उससे भिन्न। रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी भावना को अभिव्यक्त करने वाले प्रतिनिधि काव्य 'गीतांजलि', 'नैवेद्य', 'बलाका' आदि हैं। बंगला में रवीन्द्रनाथ से पूर्व रहस्यवादी चिंतन को खोजे तो बांग्ला वैष्णव साहित्य और बाउल साहित्य दृष्टिगत होंगे एवं रहस्यवाद के सन्दर्भ में रवीन्द्रनाथ इनके भी ऋणी हैं। इतना निश्चित है कि 'गीतांजलि', 'नैवेद्य' की अभिव्यंजना शैली अपूर्व थी। बंग साहित्य पहले इसके इस रूप में दर्शन नहीं होते और इस खास शैली के प्रचालन का श्रेय जाता है रवीन्द्रनाथ ठाकुर को।

जाहिर है कि रवीन्द्रनाथ की औपचारिक शिक्षा नहीं थी। वे स्वयं इसमे रूचि नहीं ले रहे थे पर अपने स्वाध्याय एवं गृहशिक्षा, उन्हें शैक्षिक दृष्टि से सक्षम बनाने में समर्थ रहे। बंगला, अंग्रेजी, संस्कृत, हिंदी आदि

की अच्छी जानकारी उन्हें थी। वे मातृभाषा में शिक्षा - दान के पक्षधर थे।

रवीन्द्रनाथ कविता के दो भेद करते हैं - 1. - वस्तुगत, 2. - भावगत। वस्तुगत कविता की तुलना में भावगत कविता को वे उच्चकोटि की मानते हैं (देखिये वस्तुगत ओ भावगत कविता, रवीन्द्र रचनावली, समालोचना, पृ. - 79)। भावगत कविता सीमा की उस पार की कविता है। वह वस्तुगत कविता की भांति इतिवृत्तात्मक नहीं है। वह असीम की कविता है। यह रहस्यभरी है। वस्तुगत जगत दृश्यमान है। भावगत कविता हृदय की कविता है। अस्फुट है। इंद्रियजगत से वह मन को अन्य जगत में ले जाती है। वह जगत अदृश्य है पर क्षणिक नहीं। ऐसी कविता के लिए भाषा के भी विशिष्ट रूप का होना जरुरी है।

भाषिक संरचना के सन्दर्भ में रवीन्द्रनाथ के काव्यरूप को जानलेना जरुरी है। स्वयं रवीन्द्रनाथ अपने को गीतिकाव्य का कवि मानते हैं।

रवीन्द्रनाथ 'साहित्य का विचारक' शीर्षक निबंध में लिखते हैं - ''प्रकृति में प्रत्यक्ष की हम प्रतीति करते हैं, साहित्य और ललित कला में अप्रत्यक्ष हमारे निकट प्रतीयमान होता है। इसी प्रत्यक्षता के अभाववश साहित्य में छंद - बद्ध, भाषा - भंगी के तरह - तरह के कल - बल का आश्रय लेना पड़ता है।''[72] यह कहना न होगा की रवीन्द्रनाथ साहित्य की अभिव्यंजना के तत्त्वों के प्रति गंभीर रहे हैं।

बंगला साहित्य के प्रारंभिक चरण में राजा राममोहन राय की भूमिका की रवीन्द्रनाथ भूरी - भूरी प्रशंसा करते हैं। लिखते हैं ''राममोहन ने बंगला साहित्य को ग्रेनाइट के धरातल पर स्थापित करके उसे डूब जाने की स्थिति से उबार लिया था, बंकिमचंद्र उसी के ऊपर प्रतिभा का प्रवाह डालकर उपजाऊ गिली मिटटी की तहें जमा गए हैं।''[73]

आगे की रही मजबूत घर बनाने की बात। साहित्य का यह मजबूत घर - निर्माण का श्रेय अवश्य रवीन्द्रनाथ सरीखे साहित्यकारों को जाता है। **<u>शब्दचयन :</u>** काव्य में आत्माभिव्यक्ति होती है और इसके लिए एक अकृत्रिम भाषा की जरुरत है - इसे रवीन्द्रनाथ अच्छी तरह समझते थे। वे स्पष्टतः लिखते हैं - "भाषा में मनुष्य की सबसे बड़ी सृष्टि है साहित्य।"[74] प्राकृत जगत की भाषा यानी व्यवहारिक भाषा को वे तथ्यात्मक भाषा और साहित्यिक भाषा धरती के मनुष्य की कल्पनाप्रवण भाषा है। काव्य के शब्द - चयन के संबंध में रवीन्द्रनाथ का मानना हैं - "शब्द बाछाइ भाव बछाइयेर शिल्प काज चलेछे पृथिवीर साहित्य जुड़े। संगे संगे छंदे चलेछे छानिर काज।"[75] अर्थात शब्द चयन भाव चयन का शिल्प कार्य सारे संसार के साहित्य में सदैव चल रहा है। साथ ही साथ छंद में भी ध्वनि का कार्य जारी है। बंकिमचंद्र के पहले ही बंगला काव्य भाषा के दारिद्रय को देखकर रवीन्द्रनाथ चिंतित हो जाते हैं। बंगला शब्द भण्डार के संबंध में उनकी बद्धमूल धारणा थी कि संस्कृत आश्रय के बिना बंगला भाषा अचल। रवीन्द्रनाथ जिनके काव्यों से प्रभावित थे वे हुए - जयदेव, कालिदास, वैष्णव कवियों की पदावली, वाउल पदावली। रवीन्द्र विशारद सुकुमार सेन ने उचित ही ध्यान दिलाया है - "रवीन्द्र काव्य - भाषाय बारबार व्यवहृत विशिष्ट शब्दवालीर मध्ये जयदेवेर पदावलीर हइते गृहीत एइ कयेकटि शब्द विशेष भावे उललेखयोग्य - तिमिर, निभृत, निलय, निलीन, विपुल, मदुर, रभस, विपिन, वितान, तल, निविड़, गहन, मधुयामिनी इत्यादि।"[76] आशा, निराशा, वेदना, मेघालोक आदि शब्द प्रयोग के पीछे कालिदास का हाथ रहा है तो चंडीदास, विद्यापति, ज्ञानदास, गोविन्ददास जैसे वैष्णव कवियों के प्रभाव के कारण रवीन्द्र - काव्य में दो शब्दों का प्रयोग - बाहुल्य - वेणु, वाणी भी उल्लेखनीय है।

रवीन्द्रनाथ के जीवन और कर्म पर उपनिषद की वाणी की ध्वनि उनकी काव्य भाषा में अनुगुंजित रही है। उपनिषद के आनंद - दर्शन एवं वैष्णव साधना के लीलावाद के भीतर रहस्यवादी भावनाएँ झांकती रही है। स्वाभाविक है कि रवीन्द्रनाथ इस भावना के कायल होने के कारण उसकी अभिव्यक्ति हेतु अनुकूल शब्द चयन के प्रति सदैव जागरूक रहे हैं। जाहिर है कि रवीन्द्रनाथ के काव्य - संसार का महत्त्वपूर्ण भाग रहस्यवादी भावना का रहा है जो मूलतः 'गीतांजलि', 'नैवेद्य', 'बलाका' आदि की कविताएँ इस भावना से सम्बद्ध है जिससे उनकी प्रसिद्धि की किरणें विश्व भर में फैल गई। उस भावना क्षेत्र को निम्न आकार देने वाले शब्दों की निम्न तालिका अवलोकनीय है - प्रिय, प्रेयसि, सखि, प्रिया, प्रियतम, स्वामी, नाथ, रूपसी, असीम, अतिथि, परशमणि, अन्तेर्यामी, अनन्त, नवीन, नव, नूतन, रजनी, निशा, तिमिर, आँधार, झड, अंधकार, प्रभात, यामिनी, वेदना, वासना, स्वपन, स्मृति, मानसी, भाव, हासि, अश्रु, हिया, विरह, दीप, दीपक, संध्या, अश्रु, क्रन्दन, कान्ना, रोदन, हावा, आलो, आलोक, सभा, शिउली, काँण्डारी, फुल, फुल्ल, हासि, मेघ, बादल, मधुर, आनन्द, यात्री, रात्रि, दिवस, छाया, माया, काया, मर्मर, सुख, दुख, तारा, चुम्बन, झरना, देवता, गान, आकाश, बातास, नभ, नील, तरी, तरणी, झंकार, आदि। इसी क्रम में बहुल प्रयोग वाले शब्द हैं - आलो, प्रभात, मेघ, बादल, दीप, गान, आँधार, शुधु, पागल आदि। वाद्य यंत्रों में सबसे अधिक 'बाँशि' (बांसुरी) और 'वीणा' का हुआ है।

उदाहरण - **<u>वीणा –</u>**

- **"घाटे सेइ अजाना बजाय वीणा / तरणीते।"**[77]

(गीतांजलि,गीत सं -26)

- **"मरण - वीणाय की सुर बाजे"** [78]

(गीतांजलि, गीत सं - 36)

- **"बजे उठुक आजि तोमार / वीणार तारे तारे"** [79]

(गीतांजलि, गीत सं -38)

- **"धुलाय - लुटानो नीरव आमार वीणा"** [80]

(गीतांजलि, गीत सं - 67)

- **"हे रुद्रवीणा, बाजो बाजो बाजो"** [81]

(गीतांजलि, गीत सं - 106)

- **"जीवन - वीणा ठिक सुरे ताई / बाजे ना रे"**[82]

(गीतांजलि, गीत सं - 128)

<u>बाँशि (बाँसुरी)-</u>

- **"जतोइ उठे हासि, / घरे जतोइ बाजे बाँशि"**[83]

(गीतांजलि, गीत सं - 24)

- **"बाजे नाइ बाँशि, साजे नाइ गेह"**[84]

(गीतांजलि, गीत सं - 72)

- **"बाजे तोमार बाजे बाँशि"**[85] (गीतांजलि, गीत सं - 74)

- **"यदि सरल बाँशि गड़ि / आपन सुरे दिबे भरि"** [86]

(गीतांजलि, गीत सं - 125)

- **"शतछिद्र करे जीवन / बाँशि बाजाओ हे"**[87]

(गीतांजलि, गीत सं - 154)

इस तरह वीणा और बाँशि (बाँसुरी) का बहुल प्रयोग भिन्न - भिन्न अर्थ - सन्दर्भ के साथ हुआ है।

सिर्फ शब्द - चयन ही नहीं उसे भाव - सागर में अवगाहित कर अभिव्यंजना के शिखर तक पहुँचा देना रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी काव्यकला का कमाल है। कुछ उदहारण दृष्टव्य है –

- **"गंधविधुर समीरणे,**

आम्रमुकुल सौगन्धे,

पल्लवमर्मर छन्दे,

चन्द्रकिरण सुधा सिंचित अम्बरे"[88]

(गीतांजलि, गीत सं - 54)

- **"शिशिर भेजा व्याकुलता"[89]**

(गीतांजलि, गीत सं - 38)

- **"स्तब्ध तिमिरे बहे भाषाहीन व्यथा"[90]**

(गीतांजलि, गीत सं - 100)

ऐसे विशिष्ट - प्रयोग रवीन्द्रनाथ की काव्यगत परिपक्वता के खास नमूने हैं।

<u>व्यतिरेकी प्रयोग :</u> रहस्यवादी भावना की अस्पष्टता का कारण है द्वंद्व। कोई एक स्थिति होने से संशय रह नहीं जाता है, फिर रहस्य का प्रश्न नहीं उठता। इसलिए विरोधी अर्थवाले शब्दों का प्रयोग आवश्यक हो जाता है। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं –

- **".....के गो तुमि, कार / हासिकान्नार धन"[91]**

(गीतांजलि, गीत सं - 12)

- **"जीवन जा भांगागड़ा / सबइ तारे घिरिये"[92]**

(गीतांजलि, गीत सं - 149)

- **"विचित्र सुख - दुखेर देशे / रहस्यलोक घूरिये शेषे"[93]**

(गीतांजलि, गीत सं - 132)

- **"आछि रात्रि दिवस धरे"[94]**

(गीतांजलि, गीत सं - 40)

- **"सत्य - मिथ्या साजिये दिइ जे कतो"[95]**

(गीतांजलि, गीत सं - 129)

- **"कत रूप धरे कानने - भूधरे / आकाशे सागरे हे"[96]**

(गीतांजलि, गीत सं - 25)

- **"दुख सुखेर आलोछायार परशे"**[97] (गीतांजलि, गीत सं -114)

रवीन्द्रनाथ मूलतः गीत - सर्जक हैं और शब्दों की आवृति से अर्थ का कैसे विस्तार होता है, उसमें माधुर्य का सृजन होता है और रस - सृष्टि में सहायता मिलती है - इस सब को अच्छी तरह जानते हैं। सर्वोपरि वे इससे भिज्ञ थे कि शब्दों की आवृति अथवा युग्म शब्द - प्रयोग से कैसे भाव, विशेष कर रहस्यात्मक भाव को कैसे अधिक सुन्दर और चित्ताकर्षक बनाया जाता हैं। सही मायने श्रेष्ठ गीतों में इस कौशल का स्वतः सन्निवेश देखते ही बनता है। गीतों में कोमल व तरल भाव के आग्रह का यह परिणाम है। निम्न उदाहरण उल्लेखनीय हैं –

- **"एखनि इन्द्रियबन्ध बुझि टूटे - टूटे**
  सम्पूर्ण चुम्बन एक, हासि स्तरे स्तरे।"[98]

  (सोनारतरी)

- **"शिउलीलतार पाशे पाशे,**
  झरा फुलेर राशे राशे,
  शिशिर भेजा घासे घासे।"[99]

  (गीतांजलि, गीत सं - 13)

- **"धन्य होलो धन्य होलो मानवजीवन"**[100]

  (गीतांजलि, गीत सं - 44)

- **"घरे घरे आजि कत वेदनाय"**[101] (गीतांजलि, गीत सं - 25)

- **"तुमि केमन करे गान करो जे गुणी,**
  अवाक हये शुनि केवल शुनि।"[102] (गीतांजलि, गीत सं - 22)

- **"मुक्त करो हे मुक्त करो आमारे"**[103]

  (गीतांजलि, गीत सं - 95)

- **"शालेर बने थेके थेके / झड़ दोला देय हेंके हेंके,**
  जल छूटे जाय एँके बेंके / माठेर परे।"[104]

(गीतांजलि, गीत सं - 27)

रवीन्द्रनाथ ने एक ही कविता में एक ही शब्द की अनेक वार आवृत्ति करके अर्थ छवि में निखार लाने का सफल प्रयास कई गीतों में किया है। कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं –

"आमार चित्त तोमाय नित्य हबे,
सत्य हबे
ओगो सत्य, आमार एमन सुदिन
घटबे कबे ।
सत्य सत्य सत्य जपि,
सकल बुद्धि सत्ये सँपि,
सीमार बाँधन पेरिये जाबो
निखिल भबे –
सत्य तोमार पूर्ण प्रकाश
देखबो कबे।"[105] (गीतांजलि, गीत सं - 137)

इस छंद में 'सत्य' की सात बार आवृति हुई है। उपयुक्त उदाहरण में संज्ञा की आवृति थी। अब क्रिया एवं विशेषण की आवृति देखी जाय –

"तुमि नव नव रुपे एसो प्राणे।
एसो गन्धे बरने, एसो गाने।
एसो अंगे पुलकमय परशे,
एसो चित्ते अमृतमय हरषे,
एसो मुग्ध मुदित दु नयने।
तुमि नव नव रुपे एसो प्राणे।

एसो निर्मल उज्जवल कान्त,
एसो सुन्दर स्निग्ध प्रशांत
एसो एसो हे विचित्र विधाने।
एसो दुखे सुखे एसो मर्मे,
एसो नित्य नित्य सब कर्मे,
एसो सकल कर्म अवसाने।
तुमि नव नव रुपे एसो प्राणे।"[106]

(गीतांजलि, गीत सं - 7)

रवीन्द्रनाथ तत्सम - तद्भव का एक साथ प्रयोग करते हैं। ऊपर से लगता है यह एक असंगत प्रयोग है पर गहराई से देखने पर लगेगा कि यह प्रयोग सोद्देश्य हैं और ध्वनि की संगति के लिए वे ऐसा करते हैं, जैसे - "दिन - रजनी आछेन तिनि / आमादेर एइ घरे।"[107] (गीतांजलि, गीत सं - 28) यहाँ रजनी शब्द के साथ 'दिवस' का प्रयोग वांछनीय होता है। पर उन्होंने 'दिन' का प्रयोग किया है जानबूझकर क्योकि ध्वनि की संगति के लिए ऐसा करना आवश्यक था।

छन्दाग्रह के कारण तत्सम के तद्भव के रूप में प्रयोग की स्वाधीनता कवि को होती हैं, जैसे - तत्सम 'द्वार' का प्रयोग 'दुवार' के रूप में गीतांजलि के एक गीत की पंक्ति में किया गया है -

"शून्य विदाय करबो ना तो उहारे ,
मरण जे दिन आसबे आमार दुवारे।"[108]

<u>आलंकारिकता :</u> अलंकार काव्य - शोभावर्धक के रूप में स्वीकृत हैं। रवीन्द्रनाथ का विचार हैं कि, "मन भोलावार आसरे तार अलंकारपुंज यदिबा अत्यंत गुंजरित हय, अर्थात से यदि मुखर भाषाय सुन्दरेर गोलामि करे तबु ताते तार अवास्तवता बेशि करेइ घोषणा करे।"[109] अर्थात काव्य

में अलंकार का अवास्तव प्रयोग यानी अस्वभाविक प्रयोग के पक्षधर नहीं थे। उनका मानना हैं, अलंकार बीच आकर भाव के मिलन में खलल डालता है –

अलंकार जे माझे पड़े,
मिलनेते आड़ाल करे,
तोमार कथा ढाके जे तार
मुखर झंकार।[110] (गीतांजलि, गीत सं - 125)

स्पष्ट है कि रवीन्द्रनाथ अलंकारवादी नहीं थे किन्तु अलंकार के सहज समावेश के विरोधी नहीं थे। अतः उनकी रहस्यवादी कविताओं में उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, अनुप्रास आदि प्राचीन अलंकारों के साथ विशेषण विपर्यय और मानवीकरण जैसे नये अलंकारों का सहज प्रयोग हुआ हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं –

1. **<u>अनुप्रास :</u>** अनुप्रास के प्रयोग से गीतों में पदलालित्य के साथ ध्वन्यात्मक उत्कर्ष भी पैदा होता हैं, जैसे –

   - "निबिड़ निशा निकषघन कालो,
     परान दिये प्रेमेर दीप ज्वालो।"[111]
     (गीतांजलि, गीत सं - 17)
   - "ए गान झरिया धरार धुलाय देशे"[112]
     (गीतांजलि, गीत सं - 97)

2. **<u>रूपक :</u>**

   - "देहदुर्गे खुलबे सकल द्वार"[113] (गीतांजलि, गीत सं - 117)
   - "प्राणसागरे झाँपिया पड़ि ने।"[114] (वहीं, गीत सं - 92)
   - "चरणपद्मे मम चित्त निःस्पंदित करो हे।"[115] (वहीं, गीत सं-5)
   - "कोन अनन्त प्राण - सागरे आनन्दे भासो"[116](वहीं, गीत सं-51)

- "जीवन-वीणा ठिक सुरे आर/बाजे ना रे"[117](वहीं, गीत सं-128)

3. **<u>वीप्सा :</u>** आदर, घबराहट, आश्चर्य, घृणा, रोचकता आदि प्रदर्शित करने के लिए किसी शब्द को दोहराना वीप्सा अलंकार है। रवीन्द्रनाथ की कविताओं में इसका सहज प्रयोग दृष्टिगत होता है –
   - "पुंजे पुंजे दूर सुदूरेर पाने"[118] (गीतांजलि, गीत सं - 34)
   - "दले दले चले, केनो चले नाहि जाने।"[119] (वहीं, गीत सं-100)
   - "हबे हबे प्रभात हबे"[120] (वहीं, गीत सं-71)

4. **<u>विशेषण विपर्यय :</u>**
   - "गंध विधुर समीरणे"[121]
   - "नीरव शशि रवि"[122]
   - "करुण चरणखानि"[123]

5. **<u>मानवीकरण :</u>**
   - "बातास कांदे कोण कुसुमेर घ्राणे"[124]
   - "प्रभात आजि मुंदेछे आँखि,
     बातास वृथा जेतेछे डाकि"[125]

'गीतांजलि' की एक कविता में एक ही प्रस्तुत के लिए एकाधिक अप्रस्तुतों का प्रयोग देखते ही बनता हैं –

"सुरेर आलो भुवन फेले छेये,
सुरेर हावा चले गगन बये,
पाषण टूटे व्याकुल वेगे धेये
बहिया जाय सुरेर सुरेरधुनि
चौदिके मोर सुरेर जाल बुनि।"[126] (गीतांजलि, गीत सं - 22)

<u>बिम्ब :</u> भाषा में वस्तु वा भावों का चित्रीकरण बिम्ब है। 'साहित्येर चित्र विभाग' आलेख में रवीन्द्रनाथ लिखते हैं - ".....साहित्ये चित्रविभाग यदि जीवन शिल्पीर साक्षरित हये तबे तार रूपेर स्थायित्व सम्बन्धे संशय थाकेना।"[127] रवीन्द्रनाथ ने अपनी कविताओं में चित्र भाषा का प्रयोग किया है। विदित है कि, रवीन्द्रनाथ अच्छे चित्रशिल्पी थे। कविता में बिम्बांकन उनकी रचना शैली का अंग रहा है। बिम्ब के सारे भेद रूप, घ्राण, ध्वनि, वर्ण - हर तरह के काव्य बिम्बों का सहज अंकन रवीन्द्रनाथ ने अपनी रहस्यात्मक कविताओं में किया है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं –

<u>ध्वनि बिम्ब :</u>

- "**केवल शुनि क्षणे क्षणे ताहार / पायेर ध्वनिखानि।**"[128]

(गीतांजलि, गीत सं- 39)

- "**एकला बसे शुनबो बाँशि / अकूल तिमिरे।**"[129]

(वहीं, गीत सं - 150)

<u>रूप बिम्ब :</u>

- "**कालों मेघेर फाँके फाँके रविर मृदु रेखा।**"[130]

(गीतांजलि, गीत सं - 66)

- "**आकाश तले उठलो फुटे,**
  आलोर शतदल,
  पापड़िगुलि घरे घरे
  छडालो दिक - दिगन्तरे।"[131] (वहीं, गीत सं - 48)

- "**सकाळ बेलाय ताँरि हासि / आलोक ढ़ेले पड़े**"[132]

(वहीं, पृ. - 49)

घ्राण :

"**एइ सौरभविह्वल रजनी**"[133] (गीतांजलि, गीत सं - 55)

ध्वनि : "**वन देवीर द्वारे द्वारे / शुनि गभीर शंखध्वनि ,**
आकाश वीणार तारे तारे / जागे तोमार आगमनी
कोथाय सोनार नूपुर बाजे / बुझि आमार हियार माझे" [134]
(गीतांजलि, गीत सं- 12)

वर्ण: "**एसो गो शारदलक्ष्मी, तोमार / शुभ्र मेघेर रथे,**
एसो निर्मल नील पथे,
एसो धौत श्यामल आलो झलझल / वन गिरिपर्वत।
एसो मुकुटे परिया श्वेत शतदल,
शीतल शिशिर ढाला।"[135] (गीतांजलि, गीत सं - 11)

प्रतीक: पुराने जमाने से प्रतीक का प्रयोग रचनाकार करते आ रहे है। समय बदलने के साथ प्रतीक भी बदलते रहते हैं। सूक्ष्म रहस्यमय भावों की अभिव्यंजना में रवीन्द्रनाथ ने नये प्रतीकों का प्रयोग किया हैं। उदाहरण –

- "**जीवनेर शेष गाने, हे देवता, ताइ आमि**
दिबो तब सकाशे।"[136]
(गीतांजलि, गीत सं - 149)

'शेष गाने' - जीवन की अंतिम स्थिति का प्रतीक है।

- "**से झड़ जेन सइ आनन्दे।**"[137] (गीतांजलि, गीत सं - 74)

यहाँ 'झड़' आघात का प्रतीक है।

रवीन्द्रनाथ तरी, यात्री, प्रभात, स्वपन, माझि आदि का भी अपनी रहस्यात्मक कविताओं में प्रतीकात्मक प्रयोग किया है।

रवीन्द्रनाथ रस के कवि है और रस आनन्दस्वरुप हैं। वे मानते हैं, काव्य सृजन मूलतः रस - व्यापार है। वे लिखते हैं, "आमार मत गीति कविरा तादेर रचनाय विशेष भावे रसेर अनिर्वचनीयता निये कारबार करे थाके।"[138] रवीन्द्रनाथ की रहस्यात्मक कविता करुणा एवं शांत रस प्रधान हैं।

छंद : रवीन्द्रनाथ के अनुसार, "गद्य होक, पद्य होक, रचनामात्रेइ एकटा स्वाभाविक छंद थाके। पद्ये सेटा सुप्रत्यक्ष, गद्य सेटा अन्तर्निहित।"[139] रवीन्द्रनाथ के गीत सारे छन्दोबद्ध हैं। कुछ कविताएँ छंद मुक्त हैं। वे मानते हैं कि छंद का स्वतः एक माधुर्य हैं। छंद को लेकर रवीन्द्रनाथ ने एक लंबा लेख लिखा हैं। रवीन्द्रनाथ परंपरित छंदों में शिखरिणी, मालिनी, मंदाक्रांता, शादूर्ल विक्रीडित, पयार आदि के अच्छे जानकार रहे हैं। बंगला में पयार, 14 अक्षरों छंद का वर्चस्व रहा है पर आवश्यक हेर फेर के साथ। पयार छंद के प्रति रवीन्द्रनाथ का आग्रह अधिक रहा है पर वह परम्परित रुढ़िबद्ध नियम श्रृंखला से बहुत आगे बढ़ गया है। उसके विविध रूपों की ओर रवीन्द्रनाथ ने अपने लेख 'छंद' (रवीन्द्र रचनावली एकादश खण्ड में संकलित) में किया हैं। वे लिखते हैं - "तखन पयारेर रीति सकल छंदरइ साधारण रीति बले साहित्य समाज चले गियेछिलो। ए कथा तखन निश्चित बुझेछि जे, छन्देर प्रधान सम्पद युग्मध्वनि,.....मानसी लेखबार बयसे आमि युग्मध्वनि के दुइ मात्रार मूल्य दिये छंद रचनाय प्रबृत हयेछि।"[140]

पयार : उदाहरण –

- **"आज कोनो काज नय - सब फेले दिये = 14**
  छन्दोंबद्ध - ग्रन्थगीत - एसो तुमि प्रिये = 14
  आजन्म - साधन - धन सुन्दरी आमार = 14

कविता, कल्पनालता। शुधु एक बार"[141] = 14

(सोनारतरी - मानससुन्दरी)

- **"आबार एसेछे आषाढ़ आकाश छेये = 14**
  आसे वृष्टिर सुवास वातास वेये = 14
  एइ पुरातन हृदय आमार आजि = 14
  पुलके दुलिया उठिछे आवार बाजि"[142] = 14

(गीतांजलि)

<u>शादूर्ल विक्रीडित :</u> छंद के प्रत्येक चरण में 19 वर्ण होते हैं। इसमें 12 और 17 वर्णों पर यति होती है। रवीन्द्रनाथ ने इसका प्रयोग अपने ढंग से किया हैं –

"अन्तर मम विकशित करो,अन्तरतर हे। = 19
निर्मल करो उज्जवल करो, सुन्दर करो हे। = 19
जाग्रत करो, उद्यत करो, निर्भय करो हे। = 19
अन्तर मम विकशित करो, अन्तरतर हे।"[143] = 19

(गीतांजलि)

गीतों में उन्होंने अधिकतर सात, आठ, नौ अथवा बारह मात्रावाले छन्दों का प्रयोग किया हैं।

उदाहरण - 1.

"तोमार दया यदि = *7*
चाहिते नाआ जानि = *7*
तबुओ दया करे, = *7*
चरणे नियो टानि।"[144] = *7* (गीतांजलि)

दरअसल यह उदाहरण पयार का है जो सात - सात मात्रा वाले चरणों में विभक्त है।

3. दस सात का प्रस्तुत उदाहरण वस्तुतः शिखरिणी छंद का रूपान्तर हैं। शिखरिणी छंद छह और ग्यारह वर्णों के विराम से कुल सत्रह मात्राओं से युक्त होता हैं। यहाँ दस और सात मात्राओं का विभाजन है –

"चाइ गो आमि तोमारे चाइ, = 10
तोमाय आमि चाइ, = 7
एह कथाटि सदाय मने, = 10
बलते आमि पाइ।"[145] = 7

(गीतांजलि,गीत सं - 88)

यहाँ स्पष्ट कर देना उचित है कि बंगला की मात्रा गणना में संस्कृत नियम लागू नहीं होते। बंगला भाषा की प्रकृति और ध्वनि - नियम स्वतंत्र हैं। मात्रा - गणना में युग्म शब्द (संयुक्त वर्ण) और हसन्त (हलंत) का प्रभाव होता है। बंगला छंद संस्कृत के अनुकरण में निर्मित हैं न कि इसमें उनके अनुशासन का पूर्ण अनुपालन है। अतः यह कहना संगत होगा कि रवीन्द्रनाथ अपनी रहस्यवादी कविताओं में संस्कृत छंदों का अनुकरण तो किया हैं पर अपने को परम्परित छंद नियमों का दास बनने नहीं दिया हैं और इसी में उनकी मौलिकता या नवीनता स्पष्ट झलकती हैं।

<u>शैली :</u> रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी कविताएँ मूलतः गीतधर्मी हैं। गीतिकविता के सारे गुण इनमें समाविष्ट हैं। यह कहना अतियुक्ति नहीं होगा कि बीसवीं शताब्दी में रहस्यभावना युक्त श्रेष्ठ गीत रवीन्द्रनाथ ने दुनिया को दिये। उनके गीतों की तरंग शैली अद्वितीय रही है। अध्यात्मिक प्रेम, प्रकृति सम्बन्धी विरह, मधुर व उल्लास भरी बातों के लिए यह शैली श्रेष्ठ साबित होती है। जयदेव, वैष्णव, व बाउल के प्रभाव से शैली में

लोकधर्मिता समाविष्ट होकर अधिक आकर्षक बन गई हैं। उन्होंने लिखा हैं –

"पुरातन भाषा मरे एलो जबे मुखे,
नवगान हये गुमरि उठिलो बुके।"[146]

(गीतांजलि, गीत सं.-124)

(पुरानी भाषा जब मृतप्राय हो गई तो वह नवगीत बन कर हृदय में उमड़ आई।)

बंगला बाउल ने किस तरह रवीन्द्रनाथ को विशेष कर रहस्यवादी भाव - वस्तु व शैली की दृष्टि से - आछन्न कर रखा था उसका प्रमाण गीतांजलि के इस गीत में स्पष्ट है –

" **रूप - सागरे डुब दियेछि,**
अरूप - रतन आशा करि;
घाटे - घाटे घुरबो ना आर,
भासिये आमार जीर्ण तरी।
समय जेनो हय रे एबार
ढेउ - खावा सब चुकिये देबार
सुधाय एबार तलिये गिये,
अमर हये रबो मरि ।"[147] (गीतांजलि, गीत सं- 47)

अर्थात रूप - सागर में अरूप - रत्न की आशा लेकर डूब गया हूँ। अपनी जीर्ण तरी को खेते हुए घाट - घाट पर अब न भटकता फिरूँगा। लहरों से टकराने का सब कुछ चुका देने का समय आ जाय, सुधा की गहराई में उतर कर अब की वार मर कर अमर हो रहूँगा।

रहस्यवादी भाव - वस्तु की अभिव्यंजना की दृष्टि से रवीन्द्रनाथ अपने युग के श्रेष्ट शिल्पी रहे हैं। रहस्यवादी भाव को व्यक्त करने में तमाम भाषिक कौशल में रवीन्द्रनाथ सफल सिद्ध हुये हैं।

भाषिक अभिव्यंजना : महादेवी वर्मा एवं रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी कविताएँ

तुलनात्मक निष्कर्ष -

काव्य में वस्तु साध्य है तो साधन है भाषा। वस्तु कितनी ही अच्छी हो पर उपयुक्त साधन यानि माध्यम के आभाव में वह निरर्थक, मूल्यहीन व बेकार साबित होती है और इस बात से विश्व कवि रवीन्द्रनाथ तथा छायावादी महीयसी महादेवी अवगत थे। इसलिए उनकी काव्य - साधना का महत्वपूर्ण अंग है - भाषा - साधना। विश्व की अनंतता उसकी सबसे बड़ी विशेषता है और उसके इस रहस्य को जानने के अनंत प्रयत्नों के बावजूद उसकी अनंतता अब भी बरकरार है। सचमुच रहस्य स्वयं एक काव्य है और रवीन्द्रनाथ और महादेवी का कवि बन जाना सहज संभाव्य है। कवि तो बहुत हैं पर शिरोमणि बनना इतना आसान नहीं है। रवीन्द्रनाथ और महादेवी को उनकी अपनी भागीरथ भाषिक साधना ने यह स्थान दिलाया है। बंगला के रवीन्द्रनाथ कवि गुरु बने तो हिंदी की महादेवी को छायावादी रहस्य - साधना में शीर्ष स्थान मिला। यह कहना गलत नहीं होगा कि दोनों के काव्य में व्यक्त रहस्यभावना के कारण उनकी अपनी कवि प्रतिभा सार्थक हो गई है इसके पीछे सबसे बड़ा हाथ जिसका है, वह है भाषा। काव्य हेतु - प्रतिभा, व्युत्पति, अभ्यास का क्या काम है अगर सटीक भाषा न हो तो। सचमुच देखा जाय तो ये सारी साधनाएँ मूलतः भाषायी साधनाएँ हैं। भाषा के सच्चे साधक थे रवीन्द्रनाथ और महादेवी इसमे दो राय नहीं हैं। जगत का जो क्षेत्र अस्पष्ट है, अज्ञात

है यानी रहस्य का क्षेत्र है काव्य वस्तु के रूप में उसे अपनाकर उसे सृजनशील रूप देने की साधना में रवीन्द्रनाथ व महादेवी वर्मा बंगला व हिंदी भाषा पर जो उपकार किये हैं वे एतिहासिक हैं, स्मरणीय हैं।

काव्य सृजन में चयन की बड़ी भूमिका होती है। भाषाई इकाई के रूप में सार्थक व उपयुक्त शब्द - चयन व आवश्यकतानुसार शब्द - निर्माण तथा उसके सटीक प्रयोग के प्रति महादेवी वर्मा व रवीन्द्रनाथ सतत् जागरूक रहें हैं। काव्य में सौन्दर्य की अभिव्यक्ति होती है। रवीन्द्रनाथ का मानना हैं कि, "शेष कथा हच्छे; Truth is beauty. काव्ये एइ ट्रुथ रुपेर ट्रुथ, तथ्येर नय। कव्येर रूप यदि ट्रुथ रूपे अत्यंत प्रतीतियोग्य न हय ता हले तथ्येर अदालते से अभिनंदनीय प्रमाणित ह्लेउ काव्येर दरबारे से निन्दित हबे।"[148] इससे प्रमाणित होता है कि काव्य के रूप - सत्य के प्रति कितने गम्भीर थे रवीन्द्रनाथ। महादेवी भी अनुरूप गंभीर रही है काव्य - रूप के सत्य की प्रतीति के प्रति। रवीन्द्रनाथ एवं महादेवी दोनों अपने भाषा - साहित्य की परंपरा के अच्छे जानकार थे। रवीन्द्रनाथ बंकिमपूर्व बंगला भाषा के दारिद्रय के प्रति चिंतित थे। उस दारिद्रय को दूर करने की दिशा में वे संस्कृत साहित्य के प्रति जितने जागरूक थे उतने अपनी लौकिक परम्परा के प्रति भी। इसलिए संस्कृत या तत्सम शब्दों को बंगला शैली में ढालकर उन्हें नया रूप देने के प्रति जागरूक थे रवीन्द्रनाथ। इसलिए उनके शब्दों में बंगला के अपने शब्दों को सम्मानजनक स्थान प्राप्त हुआ है। वे 'प्रेम' के साथ 'भालोवासा' का प्रयोग करते हैं। वे 'हर्ष' के लिए 'हासि', 'समर्पण' के लिए 'सँपि', 'क्रंदन' के लिए 'कान्ना', 'मूक' के लिए 'बोबा' जैसे शब्दों का बेहिचक प्रयोग करते हैं। यह नव जागरण का समय था। भाषायी जागरण जातीय अस्मिता का अंग बनकर आया है। हिंदी में खड़ी बोली के विकास का दौर था। इसे अखिल भारतीय रूप देने का प्रयत्न जारी था। काव्य के सूक्ष्म भावों की

अभिव्यंजना में इसे समर्थ बनाने की चुनौती थी और छायावादी रचनाकारों ने इसे स्वीकारा और सूक्ष्म - कल्पना के साँचे में ढालकर उसे उपयोगी बनाया। इस दिशा में महादेवी का अवदान स्तुत्य रहा है। उन्होंने भाषा के द्वारा एक तरफ नभगंगा की तरल रजत धार बहायी तो दूसरी तरफ मुरझाई पलकों से / झरते आँसूकण दिखाये।

महादेवी एवं रवीन्द्रनाथ ने रहस्य की विशाल भूमि का आविष्कार किया जो अनिर्वचनीय तो थी पर अचिंतनीय नहीं। रहस्य - भेदन के बहाने जीवन और जगत को अभिनव रूप से देखते और रचते चले गये। दोनों महादेवी और रवीन्द्रनाथ के शब्द चयन को देखें तो सामंजस्य ही सामंजस्य नजर आयेंगे –

1. दोनों में अपेक्षया अधिक तत्सम पर जोर रहा है। लगता हैं रहस्य चिंता की अभिव्यक्ति में ये अधिक सहायक रहें हैं। बंगला और हिंदी - दोनों भाषाओँ का मूल उत्स है संस्कृत। इसलिए दोनों की कविताओं में निम्नांकित तत्सम शब्दों का प्रयोग - बाहुल्य दृष्टिगत होता है - प्रिय, अनन्त, अज्ञात, असीम, विरह, संताप, दीपक, सांध्यगगन, प्रभात, तिमिर, दिवस, मिलन, जीर्ण, संगीत, नीरव, सागर, अरूप, आशा, प्रेम, नभ, शतदल, निशा, मेघ, बादल, वसन्त, आलोक, वाणी, भुवन, वेदना, गिरि, पर्वत, यात्री, स्वपन, शिशिर, भग्न, जीवन, सुन्दर, श्री, अश्रु, किसलय, कमल, किरण, जर्जर, जीर्ण, तम, छाया, मानस आदि।
2. वाद्य यंत्रों में दोनों को वीणा और वंशी प्रिय हैं, क्योंकि प्रेम - विरह की दशा में इन दोनों की बड़ी भूमिका होती हैं। हमारी परम्परा में पुराना वाद्य यंत्र वीणा और वाँसुरी हैं। देवी शारदा एवं महर्षि नारद वीणा के विशारद हैं। भावोद्रेक में वीणा का महत्व युग युग से स्वीकृत है। दूसरी तरफ द्वापर युग में कृष्ण के हाथ की बाँसुरी का

वर्चस्व सर्वविदित है। उसके स्वर की मोहनी शक्ति गोपियों और राधिका को विचलित करती रही है। इन दोनों वाद्य यंत्रों के महत्त्व को महादेवी और रवीन्द्रनाथ ने अपनी रहस्यवादी कविताओं में महत्त्व दिया है। सुख और दुख दोनों भावों की स्थितियों में ये यन्त्र यथास्थान विद्यमान हैं –

उदाहरण : **<u>महादेवी –</u>**

- **"पिक की मधुमय वंशी बोली**
  नाच उठी सुन अलिनी भोली।"[149] (नीरजा)

- **"विश्व वीणा में अपनी आज,**
  मिला लो यह अस्फुट झंकार।"[150] (नीहार)

<u>रवीन्द्रनाथ –</u>

- **"एकला बसे शुनबो बाँशि**
  आकुल तिमिरे"[151] (गीतांजलि, गीत सं - 59)

- **"दिके दिके गान माझे,**
  मरण - वीणाय की सुर बाजे।"[152]
  (गीतांजलि, गीत सं - 36)

- **"शिशिर भेजा व्याकुलता,**
  बेजे उठुक आजि तोमार,
  वीणार तारे तारे"[153] (गीतांजलि, गीत सं - 38)

- **"तोमार यज्ञे दियेछो भार,**
  बाजाइ आमि बाँशि,
  गाने गाने गेंथे बेड़ाइ,
  प्राणेर कान्नाहासि।"[154] (गीतांजलि, गीत सं - 44)

महादेवी और रवीन्द्रनाथ - दोनों ने करुण स्थितियों की अभिव्यक्ति में वीणा और बाँसुरी का अधिकतर प्रयोग किया है। कतिपय जगहों पर रवीन्द्रनाथ ने शंख का प्रयोग किया है, जैसे –

"**गरजि गरजि शंख तोमार,**
बाजिया बाजिया उठुक एबार।"[155] (गीतांजलि, गीत सं - 77)

महादेवी और रवीन्द्रनाथ - दोनों के गीत में नूपुर - ध्वनि का महत्त्व भी अंकित हैं -

<u>महादेवी –</u>

- "**केकी रव की नूपुर - ध्वनि सुन**

  जगती जगती की मूक प्यास"[156] (नीरजा)

- "**मैं बनी प्रिय चरण नूपुर**"[157] (सांध्यगीत)

<u>रवीन्द्रनाथ</u> - "कोथाय सोनार नूपुर बाजे"[158] (गीतांजलि, गीत सं-13)

रवीन्द्रनाथ के गीतों में वाद्ययंत्र सितार का भी जिक्र हुआ है। 'गीतांजलि' की निम्नांकित कविता सितार पर आधारित है किन्तु सितार को नये रूप में बाँधने का भी आग्रह है –

"एकटि एकटि करे तोमार,
पुरानों तार खोलो,
सेतारखानि नूतन बेंधे वोलो।"[159]

(गीतांजलि, गीत सं-64)

3. **<u>आवृति :</u>** गीति कविता में स्वर, ध्वनि, लय, व छंद आदि के आग्रह के कारण शब्दों की आवृति पर जोर दिया जाता है। महादेवी वर्मा एवं रवीन्द्रनाथ के कविताओं में यह प्रवृति वर्तमान है –

<u>महादेवी</u> -

- **"रूपसि तेरा घन - केश - पाश !**

  श्यामल श्यामल कोमल कोमल

  लहराता सुरभित केश - पाश।"[160] (नीरजा)

- **"सिहर सिहर उठता सरिता - उर**

  खुल खुल पड़ते सुमन सुधा - भर

  मचल मचल आते पल फिर फिर।"[161] (नीरजा)

<u>रवीन्द्रनाथ –</u>

- **"संचित हये आछे एइ चोखे,**

  कत काले काले कत लोके लोके

  कत नव नव आलोक आलोके

  अरुपेर कत रूप दर्शन।"[162]

  (गीतांजलि, गीत सं-21)

- **"प्रभु, तोमार काने, तोमार काने, तोमार काने।**

  प्रभु, तोमार टाने, तोमार टाने, तोमार टाने।

प्रभु, तोमार दाने, तोमार दाने, तोमार दाने।

प्रभु, तोमार गाने, तोमार गाने, तोमार गाने।"[163]

(गीतांजलि, गीत सं- 79)

इस तरह की आवृत्तियों की कई दिशाएँ देखने को मिल रही हैं, जैसे - आरम्भ में, मध्य में, अंत में, अंतरा के रूप में आदि।। इससे अर्थछबि में निखर आने के साथ - साथ ध्वन्यात्मकता को भी बल मिलता हैं।

4. महादेवी और रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी कविताओं में शब्दों का व्यतिरेकी प्रयोग - बाहुल्य है। उदाहरण दृष्टव्य हैं –

<u>महादेवी –</u>

- **"विकसित मुरझाने को फूल"**[164]

(नीहार)

- **"जहाँ आशा बनती नैराश्य"**[165]

(नीहार)

- **"तिमिर में मिलता दिव्य प्रकाश"**[166]

(नीहार)

- **"संयोग - वियोग की घाटियों में"**[167]

(रश्मि)

- **"सुख दुख में भर / आया लघु उर"**[168]

(नीरजा)

- "**सीमा - असीम के मूक मिलन**"[169]

(नीरजा)

<u>रवीन्द्रनाथ –</u>

- "**एसो दुखे सुखे एसो मर्मे**"[170]

(गीतांजलि, गीत सं-7)

- "**जीवने - मरणे निखिल भुवने**"[171]

(गीतांजलि, गीत सं - 3)

- "**अरूपेर कत रूप दरशन**"[172]

(गीतांजलि, गीत सं-21)

- "**सत्य मिथ्या साजिये दिइ जे कतो**"[173]

(गीतांजलि, गीत सं - 129)

- "**ओगो काण्डारी, के गो तुमि, कार/हासिकान्नार धन**"[174] (वहीं,गीत सं - 48)

- "**शेषेर मध्ये अशेष आछे / एइ कथाटि मने**"[175]

(वहीं, गीत सं - 156)

- "**नूतनेर माझे तुमि पुरातन / से कथा जे भूले जाइ**"[176] (वहीं, गीत सं - 3)

कुछ पुरातन व खास अपनी भाषा के शब्द प्रिय रहें हैं। जैसे –

<u>महादेवी -</u> पाहुन, शाप, शलभ, रैन, बयार, निठुर, विहान, आरसी आदि।

<u>रवीन्द्रनाथ -</u> दुवारे (द्वारे), हासि (हास्य), आड़ाल (ढँककर, छिपाकर), कुँड़ि (कली), भालोबासा (प्रेम), बोबा (मूक), कान्ना (क्रंदन), आलो (आलोक), रब (रहना)_आदि।

5. महादेवी एवं रवीन्द्रनाथ में भावों का सूक्ष्म व विशिष्ट प्रयोग उनके कवित्व की चरम पराकाष्ठा को दर्शाता है। उदाहरण –

<u>महादेवी –</u>

- **"निशा को धो देता राकेश"[177]** (नीहार)
- **"छाया की आँखमिचौनी"[178]** (नीहार)
- **"मृगमरीचिका के चिर रथ पर"[179]** (रश्मि)
- **"अवनि - अम्बर की रुपहली सीप में"[180]** (रश्मि)

<u>रवीन्द्रनाथ –</u>

- **"स्तब्ध तिमिर बहे भाषाहीन व्यथा,**

  कालो कल्पना निबिड़ छायार तले"[181]

  (गीतांजलि,गीत सं-100)

- **"कत श्रावण - अन्धकारे मेघेर रथे"[182]**

  (गीतांजलि, गीत सं-62)

- **"एइ संगीतमुखरित गगने**

  तव गंध तरंगिया तुलियो"[183] (वहीं, गीत सं - 55)

- "**एइ सौरभविह्वल रजनी**"[184] (वहीं, गीत सं - 55)
- "**चन्द्रकिरणसुधासिंचित अम्बरे**"[185] (वहीं, गीत सं - 54)

इस तरह कल्पना सूक्ष्म - व्यंजना का क्षेत्र रवीन्द्रनाथ की तुलना में महादेवी कविता में अधिक है। रवीन्द्रनाथ अपने आराध्य से आग्रह करते हैं –

"**यदि सरल बाँशि गड़ि,**

आपन सुरे दिबे भरि सकल छिद्र तार।"[186]

(गीतांजलि, गीत सं-125)

किन्तु महादेवी की व्यंजना का क्षेत्र ऐसा सरल नहीं था। इसलिए उनपर कठिन कल्पना का आरोप लगता रहा है। सूक्ष्मता चाहिए पर व्यंजना की इतनी सूक्ष्मता अपेक्षित नहीं है जो पाठक के लिए संप्रेषणीयता में जटिलता उत्पन्न करे। पर यह तथ्य है कि मार्मिकता दोनों में हैं। रसोद्रेकता दोनों की कविता में हैं किन्तु रवीन्द्रनाथ में अपेक्षया अधिक सरलता और बोधगम्यता है।

6. महादेवी में तत्सम की प्रधानता हैं पर तूफ़ान (अरबी), अरमान (तुर्की) जैसे हिंदी में बहुप्रचलित शब्दों का प्रयोग भी किया गया है। रवीन्द्रनाथ ने भी अपनी रहस्यवादी कविताओं में लुठ (लूट - हिंदी का रूप), हावा (अरबी - हवा), खाड़ा (क्रिया - खड़ा का रूप, हिंदी), पर्दा (फारसी) आदि शब्द ओ बंगला में अति प्रचलित हैं - का प्रयोग किया है|

7. आवश्यकता के आधार पर सिर्फ शब्द - चयन ही नहीं शब्द - निर्माण का कार्य भी कवि करता है। महादेवी वर्मा की कविताओं में

कर्णाधार, अलिनी, (अलि का स्त्रीलिंग वाची शब्द), सुकेशिनी, परवेषिनी, निर्देशिनी, पेरदेशिनी आदि शब्दों का प्रयोग एक तरह उनका अपना निजी प्रयोग है। रवीन्द्रनाथ ने कई तत्सम का तद्भव के रूप में प्रयोग किया है, यथा - हरषन, परशन, दरशन, पेरान, उतसव (उत्सव), परश (स्पर्श), शकति, मुरति आदि। इन्होने 'दृष्टिपात' के तर्ज पर 'आँखिपात' (गीतांजलि, गीत सं-86) शब्द का निर्माण किया है।

8. संसार में विशालत्व की दृष्टि से समुद्र, आकाश की तुलना नहीं है और ऐसे शब्दों का महत्त्व सबसे अधिक रहस्य की अभिव्यक्ति में है - यह स्पष्ट है। महादेवी और रवीन्द्रनाथ दोनों ने इन शब्दों का खूब प्रयोग किया है –

<u>महादेवी –</u>

- "**अवनि अम्बर की रुपहली सीप में**

  तरल मोती सा जलधि जब काँपता,

  तैरते घन मृदुल हिम के पुंज से

  ज्योत्स्ना के रजत पारावार में।"[187] (रश्मि)

- "**तिमिर पारावार में / आलोक - प्रतिभा है अकम्पित**"[188] (नीरजा)

- "**दे प्रकाश का सिन्धु अपरिमित**"[189] (नीरजा)

- "**जलमय सागर का उर जलता**"[190] (नीरजा)

- "**प्रिय ! सांध्य गगन / मेरा जीवन**"[191] (सांध्य गीत)

- "**बन गया तम सिन्धु का, आलोक सतरंगी पुलिन सा।**"[192] (सांध्य गीत)

<u>रवीन्द्रनाथ –</u>

- "**आनंदेरइ सागर थेके / एसेछे आज बान**"[193]
  (गीतांजलि, गीत सं - 9)
- "**कोन सागरेर पार हते आने / कोन सुदुरेर धन**"[194]
  (गीतांजलि, गीत सं - 12)
- "**कत रूप धरे कानने भूधरे / आकाशे सागरे साजे है**"[195] (गीतांजलि, गीत सं -25)
- "**गगन - भरा परशखानि / लागे सकल गाय।**

  डूब दिए एइ प्राण-सागरे/नितेछि प्राण वक्ष भरे[196]
  (गीतांजलि, गीत सं -48)
- "**आमार चित्त गगन थेके/तोमाय केउ जे राखबे ढेके**"[197]
  (वहीं, गीत सं - 63)
- "**विश्वसागर ढेउ खेलाये / उठे तखन दुले**" [198]

  (वहीं, गीत सं -120)

9. रहस्यवादी भाव चित्रण में प्रियतम केंद्र में होता है। प्रियतम के संबोधन में महादेवी और रवीन्द्रनाथ कई शब्दों का प्रयोग किया है। जिसके कुछ उदहारण उललेखनीय हैं –

<u>महादेवी :</u> करुणेश, देव, असीम, करुणामय, सखा, धूमिल घन, पाहुन, रहस्यमय, विधु के बिम्ब, अनंत, जलराशि, ऊर्मि, सर्वेश, अन्तरतर, प्रिय, प्रियतम आदि।

<u>रवीन्द्रनाथ :</u> परशमणि, अन्तरतर, नूतनेर माझे तुमि पुरातन, बन्धु, सुन्दर, काण्डारी, सखा, प्रियतम, परानसखा, अन्तर्यामी, महाराज, आलोकमय, प्रिय, साधक, प्रेमिक, पागल, वल्लभ, कान्त, गुणी, नाथ, असीम, मौन, प्रभु, देवता, पिता, जननी, वर, अशेष आदि।

10. रहस्यवादी भावों को बहुमुखी बनाने में ऋतु - चित्रण का महत्वपूर्ण योगदान रहा हैं| महादेवी और रवीन्द्रनाथ दोनों को बसन्त और वर्षा सबसे प्रिय ऋतुएँ रही हैं –

<u>महादेवी :</u>

- **"धीरे - धीरे उतर क्षितिज से**

  आ बसंत रजनी,

  पुलकित स्वपन की रोमावली

  कर में हो स्मृतियों की अंजलि,

  मलयानिक का चल दुकूल अलि !

  सकुचति आ बसन्त रजनी।"[199] (नीरजा)

- **"पावस की निशि में जुगनू का –**

  ज्यों आलोक प्रसार,

इस अभ में लगता तम का,

और गहन विस्तार

इन उत्ताल तरंगो पर सह –

झंझा के आघात,

जलना ही रहस्य है बुझना –

है नैसर्गिक बात ।"[200] (रश्मि)

<u>रवीन्द्रनाथ :</u>

- "आजि वसन्त जाग्रत द्वारे

  तव अवगुंठित कुण्ठित जीवने

  कोरो ना विडम्बित तारे।

  मोर पराने दखिन वायु लागिछे

  कारे द्वारे द्वारे कर हानि मागिछे

  एइ सौरभविह्वल रजनी,

  कार चरणे धरणीतले जागिछे।"201 (गीतांजलि)

- "आज वारि झरे झर झर

  भरा बादरे।

  आकाश - भाड़ा आकुल धारा

  कोथाओ ना धरे।

शालेर वने थेके थेके

झड़ दोला देय हेंके हेंके

जल छुटे जाय ऐंके बेंके

माठेर ' परे।

आज मेघेर जटा उड़िए दिए

नृत्य के करे।"[202] (गीतांजलि)

महादेवी में वसन्त और रवीन्द्रनाथ में वर्षा के चित्र अधिक मोहक बन पड़े हैं। रवीन्द्रनाथ को शरत भी प्रिय रहा हैं –

"शरते आज कोन अतिथि

एलो प्राणेर द्वारे –

.....नील आकाशेर नीरव कथा

शिशिर - भेजा व्याकुलता

बेजे उठुक आजि तोमार

वीणार तारे तारे।"[203] (गीतांजलि)

11. साधारण शोभा - वर्धन में फूलों का चित्रण बहुत महत्त्व रखता है पर देवी और रवीन्द्रनाथ अपनी रहस्याभिव्यंजना में भी फूलों की सहायता लि है। दोनों ने पद्म (कमल) और शेफालिका, शेफाली का प्रयोग खूब किया है। पद्म के कई प्रकार होते है और अन्तः साधना में कुण्डलिनी जागरण के सन्दर्भ में साधकों ने इसकी

कल्पना की है। रवीन्द्र और महादेवी ने इसके शतदल रूप का अधिकतर प्रयोग किया हैं –

<u>महादेवी :</u>

- **"सकुच सलज खिलती शेफाली,**

  अलस मौलश्री डाली डाली;

  हरसिंगार झरते हैं झर झर।"[204] (नीरजा)

- **"विरह का जलजात जीवन, विरह का जलजात !**

  जो तुम्हारा हो सके लीलाकमल यह आज।"[205] (नीरजा)

- **"मेरे दृग के तारक में नव उत्पल का उन्मीलन रे !"**[206]

  (नीरजा)

<u>रवीन्द्रनाथ :</u>

- **"आकाशतले उठलो फुटे / आलोर शतदल**

  पापडिगुलि थरे थरे / छाडालो दिक् दिगन्तरे"[207]

  (गीतांजलि)

- **"आमारे आड़ाल करिया दांड़ाओ / हृदयपद्मदले"**[208] (वहीं)

- **"चरणपद्मे ममचित्त निःस्पंदित करो हे"**[209] (वहीं)

- **"चेतना आमार कल्याणरस सरसे / शतदल - सम फुटिलो परम हरषे"[210]** (वहीं)

- **"आमरा बेंधेछि काशेर गुच्छ, आमरा**

  गेंथेछि शेफालिमाला

  झरा मालतीर फुले / आसन बिछानो निभृत कुंजे"[211]

  (गीतांजलि)

- **"हृदय - शतदलेर सकल**

  दलगुलि एइ फुटलो रे / एइ फुटलो रे"[212] (गीतांजलि)

दोनों ने फूल के आलंकारिक एवं प्रतीकात्मक प्रयोग किया हैं जो उपयुक्त उदाहरणों से स्पष्ट है।

12. मुहावरेदार प्रयोग से महादेवी और रवीन्द्रनाथ की रहस्यवादी कविताओं की अर्थछवि और निखर उठी हैं।

उदाहरण - **<u>महादेवी :</u>**

- **"शलभ मैं शापमय वर हूँ।"[213]** (सांध्य गीत)
- **"एक ज्वाला के बिना मैं राख का घर हूँ।"[214]** (वहीं)
- **"झुकी जाती पलकें सुकुमार"[215]** (रश्मि)
- **"क्यों भरता इन आँखों में धूल"[216]** (नीहार)
- **"मेरा दीपक बुझ जाने दो"[217]** (निहार)

<u>रवीन्द्रनाथ :</u>

- **"परान दिये प्रेमेर दीप ज्वालो"**[218] (गीतांजलि)
- **"{आमार नयन - भुलानो एले"**[219] (वहीं)
- **"लुटिये पड़े वने वने"**[220] (वहीं)
- **"फेले जेते चाय किनाराय / सब चावा सब पावा"**[221] (वहीं)
- **"आकाश - भाड़ा आकुल धारा"**[222] (वहीं)

13. **<u>तद्भव :</u>** तत्सम युग्म शब्दों का प्रयोग साधारणतः नहीं किया जाता। पर आवश्यकतानुसार महादेवी और रवीन्द्रनाथ दोनों ने इसका सहज - प्रयोग किय हैं –

<u>महादेवी :</u> "नींद सागर से सजनि ! जो दूँढ लाई स्वप्न मोती"[223] (सांध्य गीत)

यहाँ नींद - निंद्रा (तत्सम) का तद्भव रूप है । मोती - मुक्ता (तत्सम) का तद्भव रूप है। नींद - सागर और स्वप्न मोती का एक साथ प्रयोग भी हुआ है।

<u>रवीन्द्रनाथ :</u> "दिन रजनी आछेन तिनि आमादेर एइ घरे।"[224] (गीतांजलि, गीत सं. - 49)

यहाँ दिवस (तत्सम) का दिन है तद्भव रूप और रात्री का तत्सम है रजनी। दोनों का एक साथ प्रयोग हुआ हैं।

14. काव्य के प्रसाधनो में प्रमुख हैं - अलंकरण जो अलंकार, बिम्ब, प्रतीक आदि के प्रयोग से सार्थक होता हैं। प्रारंभिक जीवन में (छह सात साल की उम्र से) महादेवी तुकबंदी करतीं थी। काव्य साधन का है प्रथम अभ्यास। वे लिखती हैं, "अलंकार - पिंगल का जो ज्ञान मुझे बचपन में प्राप्त हुआ, वह बड़े होने पर भी मेरे बहुत काम आया।"[225] यानी महादेवी को छोटी अवस्था में ही इन सब

का ज्ञान हो गया था। छोटी अवस्था में रवीन्द्रनाथ को भी काव्य - सृजन की ओर झुकाव हो गया था और काव्य के प्रसाधनो से वे परिचित थे किन्तु वे कृत्रिमता के पक्षधर नहीं थे और पुरातन का अनुकरण भी उनका साध्य नहीं था। वे लिखते हैं, ".....किंतु चिंताय मानुष तार सेदिनकार गण्डि अनेक दूर छाड़िये गेछे। अतएव इदानीन्तन साहित्य जखन मानुष देखा जाय, तखन भावे चलाय बलाय सेदिनकार नकल करले सम्पूर्ण असंगत हवे।"[226] जाहिर है कि महादेवी वर्मा रवीन्द्रनाथ से परिचित और प्रभावित थी| महादेवी ही नहीं सम्पूर्ण छायावाद के समस्त रचनाकार नवीनता के पक्षधर थे | महादेवी जी वसंत रजनी का आह्वान करते समय नवता को नहीं भूलतीं -

"तारकमय नव वेणीबंधन

पुलकित आ वसन्त - रजनी !"[227] (नीरजा)

दूसरी ओर रवीन्द्रनाथ नूतनता को वरेण्य मानते हैं | अपने आराध्य का आह्वान यों करते हैं -

"तुमि नव - नव रुपे ऐसो प्राणे |
एसो गन्धे बरने एसो गाने |"[228]

(गीतांजलि , गीत सं -7)

अर्थात महादेवी एवं रवीन्द्रनाथ कुत्रिमता के विरोधी और नवीनता के पक्षधर थे | अतः अलंकारवादी न होने पर भी , अलंकार उनके लिए त्याज्य नहीं था | इसलिए दोनों में रूपक , उपमा , श्लेष , वीप्सा , विरोधाभास , अनुप्रास , यमक जैसे पुराने

अलंकारों का स्वाभाविक समावेश हुआ है | किंतु प्रस्तुत - अप्रस्तुत को लेकर नवीनता का आग्रह सर्वोपरि रहा है | साथ ही विशेषण विपर्यय , मानवीकरण और ध्वन्यर्थव्यंजना - इन तीनों नवीन अलंकारों का सर्वाधिक प्रयोग किया है कतिपय उदाहरण अवलोकनीय है -

<u>महादेवी :</u>

i. **<u>उपमा :</u>** **"तड़ित सी जो अधरों की ओट"**[229] (रश्मि)

यहाँ उपमेय है अधर , उपमान है तड़ित , वाचक शब्द है सी और साधर्म्य है ओट |

ii. **<u>अपह्नति :</u>** " आँसू के मिस हिम के कण ढुलते |"

यहाँ मिस शब्द की सहायता से कैतवापहुति है |

iii. **<u>रूपक :</u>** "जब समीर - यानों पर उड़ते"

समीर उपमेय है और यान उपमान | यहाँ समीर पर यानों का निषेध रहित आरोप के कारण रूपक अलंकार है |

iv. **<u>वीप्सा :</u>** **पुलक पुलक उर , सिहर सिहर तन ,**
आज नयन आते क्यों भर भर ?

v. **<u>मानवीकरण :</u>** "मुकुल हँसते मोतियों का अर्ध्य दे |

vi. **<u>विशेषण विपर्यय :</u>** **"तुम हो विधु के बिम्ब**
और मैं मुग्धा रश्मि अजान |"

vii. **<u>ध्वन्यर्थव्यंजना:</u>** **" स्पंदन में चिर निस्पन्द बसा**
क्रन्दन में आहत विश्व हँसा |"[230]

(सांध्य गीत)

रवीन्द्रनाथ :

i. **उपमा :** **"आकांक्षा तो वन्यावेगेर मत"**

यहाँ आकांक्षा उपमेय है | वन्या उपमान और वेग साधर्म्य तथा मत वाचक शब्द है |

ii. **रूपक :** **"देहदुर्ग खुलबे सकल द्वार |"**[231]

(गीतांजलि , गीत सं - 7)

"विश्वसागर ढेऊ खेलाय |"[232] (वहीं, गीत सं- 120)

विश्व रूपी सागर में रूपक अलंकार हैं |

iii. **अनुप्रास :** **'निबिड़ नील अन्धकारे |**

निबिड़ नील में अनुप्रास हैं |

iv. **विशेषण विपर्यय :** **'नील आकाशेर नीरव कथा |'**

यहाँ कथा के विशेषण के रूप में 'नीरव' प्रयुक्त है |

v. **विरोधाभास :** **" अरुपेर कत रूपदरशन"**[233]

(गीतांजलि , गीत सं - 21)

vi. **मानवीकरण :** **"बातास काँदे कोन कुसुमेर घ्राणे |"** [234]

(गीतांजलि)

vii. **ध्वन्यर्थव्यंजना:** **"ओगो जनि ना की नन्दनरागे**
सुखे उत्सुक यौवन जागे |
आज आम्रमुकुल सौगन्धे
नव - पल्लवमर्मर छन्दे
चन्द्र किरण सुधा सिंचित अम्बरे
अश्रुसरस महानन्दे |"[235]

(गीतांजलि , गीत सं - 54)

महादेवी की तुलना में रवीन्द्रनाथ आलंकारिकता की अपेक्षा रसभिव्यन्जना पर अधिक जोर देते नजर आते हैं |

15. **<u>बिम्ब - योजना :</u>** भावचित्रांकन रवीन्द्रनाथ एवं महादेवी वर्मा का परम लक्ष्य रहा है , इसीलिए इनकी रहस्यवादी कविताओं में चित्रभाषा - प्रयोग - प्राचुर्य है | रूप , रस , वर्ण , ध्वनि , गंध - इनके सब विभाव इनकी कविता में उपलब्ध है | कतिपय उदाहरण दृष्टव्य हैं -

<u>महादेवी वर्मा</u> :

- <u>स्मृति बिम्ब</u> : **"वे स्मृति बनकर मानस में"**

  "खटका करते हैं निशिदिन" [236] (रश्मि)

- <u>रूप बिम्ब :</u> **"नभ गंगा की रजतधार में**
  धो आई क्या इन्हें रात ?
  कम्पित है तेरे सजल अंग
  सिहरा सा तन है सद्ध्यस्नात |"[237]
  (नीरजा)

- <u>ध्वनि बिम्ब :</u> "**मर्मर की सुमधुर नूपुर - धवनि ,**
  अलि - गुंजित पद्यों की किंकिणी
  भर पद - गति में अलस तरंगिणी |"[238]
  (नीरजा)

<u>रवीन्द्रनाथ :</u>

- <u>स्मृति बिम्ब :</u> **"अतीत जीवन छायार मत**
  चलछे पिछे पिछे ,
  कत मायार बांशिर सुरे

डाकछे आमाय मिछे |"[239]

(गीतांजलि , गीत सं - 63)

- <u>रूप बिम्ब :</u> **"शस्यखेतेर सोनार गाने ,**
  योग दे रे आज समान ताने ,
  भासिये दे सुर भरा नदीर
  अमल जलधारे |"[240] (गीतांजलि)

- <u>ध्वनि बिम्ब</u> : **"गुंजरिया गुंजरिया**
  प्राण उठिलो पुरे ,
  जानि के कोन , विपुल वाणी
  बाजे व्याकुल सुरे |"[241]
  (गीतांजलि ,गीत सं - 60)

रूपकल्प या चित्रमयी भाषा भाव को मूर्त रूप या प्रत्यक्ष बनाने में मददगार बनती है | ऐसी व्यंजना के लिए महादेवी के लिए ह की प्रेरणा पाथेय बनी है पर उत्तरोत्तर महादेवी इस बावत आगे निकलती गई हैं | इनकी हर कविता में यह बिम्बवादी स्वरूप स्वभाव सा बनता अ गया है|

16. **<u>प्रतीक :</u>** बिम्ब और प्रतीक का चोलीदामन साथ होता है | प्रतीक के सटीक प्रयोग से कविता का गांभीर्य बढ़ जाता है | किसी सार्थक शब्द या ध्वनि के प्रयोग से मन में उसकी अर्थ छवि उभरकर आती है | जैसे एक शब्द है पागल | इसके साधारण अर्थ से सभी सभी अवगत हैं | महादेवी और रवीन्द्रनाथ की कविताओं में इसका बहुल - प्रयोग उपलब्ध है | कतिपय उदाहरण देखे जा सकते हैं -

<u>महादेवी :</u>

- **" अमर हमारा राज्य सोचते**
  हैं जब मेरे पागल प्राण

  आकर तब अज्ञात देश से , जाने किसकी मृदु झंकार
  गा जाती हैं करुण स्वरों में 'कितना पागल है संसार!"[242]

  (नीहार)

- **"झटक जाता था पागल वात"**[243] (नीहार)

<u>रवीन्द्रनाथ :</u>

(i) **"पागल हावा नृत्ये माति"**[244] (गीतांजलि, गीत सं -70)

(ii) **"जेगे देखि दखिन हावा / पागल करिया"**[245]

(वही, गीत सं -61)

(iii) **"द्वारे द्वारे भाङल आगल/हृदय माजे जागलो पागल"**[246] (गीतांजलि, गीत सं - 27)

(iV) "**तोमार साथे जागते से चाय / आनन्दे पागल"**[247]

(वही, गीत सं -89)

वास्तव में पागल वह है जिसका दिमाग खराब हो गया हो। जिसकी विवेक-शक्ति नष्ट हो गई हो। नामसमझ, बावला, विक्षिप्त आदि। किंतु, महादेवी व रवीन्द्रनाथ की कविता में स्वाभाविक अर्थ के साथ, विशिष्ट अर्थ भी स्पष्ट है, जैसे – समर्पित प्राण, प्रेमी या ईश्वर और ये विशिष्टार्थ प्रतीक के रूप में आये हैं इसी तरह रवीन्द्रनाथ व महादेवी – दोनों को प्रिय रहे प्रतीक हुए - यात्री, कमल, छाया, प्रभात, संध्या, झंझा,

वीणा, वंशी, स्वप्न, दीपक, पद्य, माझी, अंधकार, तरी, फूल, आकाश, सागर, बादल, झड़, घर, दर्पण, मौन आदि। महादेवी में 'शलभ' का की जगहों पर प्रतीकात्मक प्रयोग है पर रवीन्द्रनाथ में यह अनुपलब्ध है। रवीन्द्रनाथ ने सभा का प्रतीकात्मक प्रयोग किया है। 'शाप' का सुन्दर चित्रात्मक शब्दों में प्रतीकात्मक प्रयोग महादेवी की रहस्यवादी कविताओं में है, जैसे –

1. **''शाप हूँ जो वन गया वरदान बन्धन में''**[248] **(नीरजा)**
2. **''शलभ मैं शापमय वर हूँ?**
   किसी का दीप निष्ठुर हूँ।''[249] **(सांध्यगीत)**
3. **''विश्व का अभिशाप क्या चिर नींद बनकर पास आया''**[250]
   (सांध्यगीत)

बंग्ला में 'शापे वर' (साप ही वर या शाप में वर) कहावत के रूप में प्रचलित है। महादेवी को बंगला की अच्छी जानकारी रही है। उनकी कविता में बंगला के तर्ज पर 'शापमय वर' का प्रयोग है। रवीन्द्रनाथ ने भी इसका प्रयोग किया है पर महादेवी के बरक्स कम। रवीन्द्रनाथ ने शाप के साथ ग्रह का भी प्रतीकात्मक रूप को अपनाया है,

''कोन शापे कोन ग्रहेर दोषे
मुखे डाडाय थाकबो वसे।''[251] (गीतांजलि, गीत सं -9)

रवीन्द्रनाथ ने प्रभावशाली 'परशमणि' का प्रयोग प्रतीक के रूप में किया है जो महादेवी में नहीं है –

''रहिया रहिया जे परशमणि
झलके अलककोणे
x x

सोना हये जाबे सकल भावना

आँधार हइबे आला।''[252] (गीतांजलि, गीत सं -11)

17. **<u>छन्द और शैली :</u>**

महादेवी और रवीन्द्रनाथ दोनों ने मुक्त छन्द की कविताएँ लिखी हैं पर दोनों का आग्रह छन्दोबद्धता की ओर हमेशा रहा है। दोनों को पिंगल शास्त्र का ज्ञान था पर ये प्राचीनता के पुजारी या परंपरा के शव-साधक नहीं होने के कारण नवीन भावस्तु और नवगान के प्रयोजनों को ध्यान में रखकर छन्दों में आवश्यक परिवर्तन को उचित मानते रहे हैं। इसलिए रवीन्द्रनाथ <u>पयार</u> की रीति में काफी परिवर्तन किया है और महादेवी ने रोला, रूपमाला आदि छन्दों का भी प्रयोग अपनी आजादी के साथ किया है। गीति कविता महादेवी और रवीन्द्रनाथ –दोनों की मूल सम्पत्ति रही है और गीत छन्दों में ही ढलता है। इस संदर्भ में रवीन्द्रनाथ और महादेवी का झुकाव लोकशैली की ओर रहा है। रवीन्द्रनाथ के सामने बंगला लोक गीतों के अतिरिक्त वैष्णव पदावली और बाउल भी रहे हैं हिन्दी लोकगीतों और लोक छन्दों में महादेवी का भी परिचय रहा है आल्हा (वीर) लावनी महादेवी को अधिक पसंद है। लोक वृत्ति के कारण रवीन्द्रनाथ और महादेवी के रहस्यात्मक गीतों में भाव के अनुकूल लय, नाद और गति को नये आयाम मिले हैं जिन से कमाल की तरंग युक्त नृत्य रीति का सृजन हो सका है और इस तरह की शैली के कराण इनकी रहस्यात्मक कविताओं को नई ऊँचाई मिल सकी है।

इस संसार में कोमल एवं कठोर दोनों पक्षों का समाहार है और स्वाभाविक रूप से महादेवी एवं रवीन्द्र में दोनों की सुन्दर एवं प्रभावशाली भाषिक व्यंजना यतास्थान संयोजित है यद्यपि कोमल व करुण स्थितियों को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ है, क्योंकि जिनके लिए पीड़ा प्रिय है, वेदना वरेण्य है, जलन मधुर है, मिटना सुन्दर है, अरूम में रूप-दर्शन है , सीमा में

असीम समाहित है तो फिर उनके लिए कठोर - कोमल के बीच, जय-पराजय, हँसने-रोने, मिलन-विरह के बीच क्या फर्क रह जाता हैं । महादेवी की पंक्तियाँ देखी जायं –

"हे सृष्टि-प्रलय के आलिंगन !
सीमा असीम के मूक मिलन !
कहता है तुझको कौन घोर
तू चिर रहस्यमयि कोमलतर !
अप्सरि तेश नर्तन सुन्दर !"[253] (नीरजा)

रवीन्द्रनाथ की पंक्तियाँ अवलोकनीय हैं –

"जा बुझि सब भुल बुझि हे,
जा खुँजि सब भुल खुँजि हे –
हासि मिछे, काबा मिछे,
सामने एसे ए भुल घुचाओ।
दाओ हे आमार भय भेंगे दाओ।"[254] (गीतांजलि,गीत सं -32)

रहस्य-भावना की अभिव्यंजना के बहाने महादेवी और रवीन्द्रनाथ की शिल्प-साधना ऐतिहासिक रही है। साधना के प्रति समर्पण में रवीन्द्रनाथ का हृदय पक्ष हमेशा हावी रहा है पर महादेवी में विदग्धता भारी है। रवीन्द्र की यात्रा अविधा से व्यंजना की ओर अधिक है तो महादेवी में व्यंजना के सामान्यीकरण पर जोर। कुछ भी हो दोनों में तन्मयता और गहराई सर्वोपरि है। दोनों के लिए यह धरती प्रिय है। दोनों में इसके प्रति अमोघ आकर्षण है। महादेवी इसके महत्त्व को इस प्रकार व्यक्त करती हैं –

"वे मुस्काते फूल, नहीं

जिनको उसका है मुरझाना,
वे तारों के दीप, नहीं
जिनको आता है बुझ जाना|"[255] (नीहार)

रवीन्द्रनाथ धरती के आकर्षण को यों चित्रित करते हैं

''मरिते चाइ न आमि सुन्दर भुवने
मानुषेर माझे आमि बांचितारे चाइ।''[256]

अर्थात्

''सुन्दर संसार में मैं मरना नहीं चाहता,
मनुष्यों के बीच मैं बचना चाहता हूँ।''

दोनों पृथ्वी के कवि हैं – महादेवी और रवीन्द्रनाथ। उनकी अलौकिकता दरअसल लौकिकता का रहस्यजनिक उत्तरण है। स्वाभाविक रूप से दोनों की अभिव्यक्ति के साधन, यानी माध्यम – हिन्दी और बंगला एक ही परिवार की हैं और दोनों का मूल उत्स एक है – संस्कृत। और दोनों की भाषाओ में तत्सम प्रयोग बाहुल्य है। इसलिये दोनों में भाषायी सामंजस्य अधिक हैं या थोड़े से हेर-फेर के साथ दोनों में भाषिक समानताएँ अधिक हैं। वस्तु – रहस्यवाद मूलतः भारतीय चरित्र का है जिसका मूल आधार उपनिषद है। अतः यह स्वाभाविक है कि दोनों की अभिव्यंजना के माध्यम और पद्धति में सामंजस्य अधिक और अंतर कम परिलक्षित हो रहे हैं। जाहिर है कि मध्यकाल में यह रहस्य-तत्त्व अव्यक्त, अनिर्वचनीय था। इसके चित्रण में संध्या भाषा आदि पद्धतियों का आश्रय लेना पड़ा था। पर महादेवी और रवीन्द्रनाथ उसे आधुनिक भारतीय भाषा में नवीन रूप में प्रस्तुत कर भारतीय वाङ्मय पर जो उपकार किये हैं उनके लिए वे सदा स्मरणीय रहेंगे।

सन्दर्भ - ग्रन्थ – सूची

1. साहित्यशास्त्र और काव्य भाषा, डॉ. सियाराम तिवारी, विभू प्रकाशन, साहिबाबाद, 1978, पृ. - 11 (प्रस्तावना)
2. कबीर ग्रन्थावली, प्रो. पुष्पपाल सिंह, अशोक प्रकाशन, दिल्ली 6, अष्टम संस्करण - 1988, पृ. - 5
3. पल्लव, सुमित्रानन्दन पंत, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2002, पृ. - 15-16
4. कल सुनना मुझे, धूमिल, युगबोध प्रकाशन, वाराणसी, 1977, पृ. - 1
5. तार सप्तक, अज्ञेय (संपादक), भारतीय ज्ञानपीठ, लोदी रोड, नयी दिल्ली, 2009, पृ. - 245
6. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ - 37
7. वहीं, पृ. - 38
8. वहीं, पृ. - 103
9. वहीं, पृ. – 16
10. वहीं, पृ. - 1
11. वहीं, पृ. - 3
12. वहीं, पृ. - 27
13. वहीं, पृ. - 65
14. वहीं, पृ. - 6
15. वहीं, पृ. - 6
16. वहीं, पृ. - 16
17. वहीं, पृ. - 34
18. वहीं, पृ. - 42

19. वहीं, पृ. - 50
20. वहीं, पृ. - 68
21. वहीं, पृ. – 67
22. वहीं, पृ. - 68
23. वहीं, पृ. - 94
24. वहीं, पृ. - 6
25. वहीं, पृ. - 7
26. वहीं, पृ. - 24
27. वहीं, पृ. - 79
28. वहीं, पृ. - 66
29. वहीं, पृ. - 67
30. महादेवी वर्मा, जगदीश गुप्त, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, पुनर्मुद्रण - 2007, पृ. - 103
31. महादेवी साहित्य (खण्ड - एक), निर्मला जैन (संपादक), वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2007, पृ. - 229
32. वहीं, पृ. - 225
33. वहीं, पृ. - 249
34. वहीं, पृ. - 273
35. वहीं, पृ. - 176
36. वहीं, पृ. – 282
37. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2009, पृ. - 102
38. वहीं, पृ. - 5
39. वहीं, पृ. - 57
40. वहीं, पृ. - 1

41. वहीं, पृ. - 65
42. वहीं, पृ. - 40
43. वहीं, पृ. - 12
44. वहीं, पृ. - 65
45. वहीं, पृ. - 65
46. वहीं, पृ. - 7
47. वहीं, पृ. – 47
48. वहीं, पृ. - 57
49. वहीं, पृ. - 40
50. वहीं, पृ. - 43
51. वहीं, पृ. - 102
52. वहीं, पृ. - 92
53. छायावाद, नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 2003, पृ. - 127
54. हिंदी साहित्य कोश, प्रधान सं.- धीरेन्द्र वर्मा, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, संस्करण - 2000, पृ. - 398
55. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2009, पृ. - 36
56. वहीं, पृ. - 3
57. वहीं, पृ. - 41
58. वहीं, पृ. - 90
59. वहीं, पृ. - 67
60. वहीं, पृ. - 93
61. वहीं, पृ. - 92

62. आधुनिक हिंदी आलोचना के बीज शब्द, बच्चन सिंह, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण - 1994, पृ. - 77
63. वहीं, पृ. - 77
64. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 35
65. वहीं, पृ. - 4
66. वहीं, पृ. - 79
67. छायावाद, नामवर सिंह, राजकमल प्रकाशन, 2003, पृ. - 98
68. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 55
69. वहीं, पृ. - 80
70. वहीं, पृ. - 90
71. वहीं, पृ. - 27
72. रवीन्द्रनाथ के निबंध (खण्ड - 2), अनुवादक - अमृतराय, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण - 1990, पृ. - 294
73. वहीं, पृ. - 439
74. रवीन्द्र रचनावली, त्रयोदश खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर , विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 पुनर्मुद्रण, पृ. - 577 (बंगला भाषा परिचय)
75. वहीं, पृ. - 593
76. बांगला साहित्येर इतिहास, चतुर्थ खण्ड, सुकुमार सेन, आनंद पब्लिशर्स कोलकाता, 2010, पृ. - 4
77. रवीन्द्र रचनावली (खण्ड - 6), रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 27
78. वहीं, पृ. - 32

79. वहीं, पृ. - 33
80. वहीं, पृ. - 50
81. वहीं, पृ. - 70
82. वहीं, पृ. - 84
83. वहीं, पृ. - 26
84. वहीं, पृ. - 53
85. वहीं, पृ. - 54
86. वहीं, पृ. – 83
87. वहीं, पृ. - 99
88. वहीं, पृ. - 43
89. वहीं, पृ. - 33
90. वहीं, पृ. - 67
91. वहीं, पृ. – 19
92. वहीं, पृ. - 96
93. वहीं, पृ. - 87
94. वहीं, पृ. - 34
95. वहीं, पृ. - 85
96. वहीं, पृ. - 27
97. वहीं, पृ. - 76
98. रवीन्द्र रचनावली (खण्ड - 2), रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रन्थम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 52
99. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ. - 50
100. वहीं, पृ. – 116
101. वहीं, पृ. – 78

102. वहीं, पृ. - 70
103. वहीं, पृ. - 224
104. वहीं, पृ. – 82
105. वहीं, पृ. - 318
106. वहीं, पृ. – 36
107. वहीं, पृ. - 28
108. वहीं, पृ. - 268
109. रवीन्द्र रचनावली (खण्ड - 14), रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1421 (पुनर्मुद्रण), पृ. -181 (निबंध - साहित्येर स्वरूप)
110. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ. - 294
111. वहीं, पृ. – 60
112. वहीं, पृ. – 228
113. वहीं, पृ. – 276
114. वहीं, पृ. – 218
115. वहीं, पृ. – 32
116. वहीं, पृ. – 34
117. वहीं, पृ. - 300
118. वहीं, पृ. - 96
119. वहीं, पृ. – 234
120. वहीं, पृ. - 176
121. वहीं, पृ. - 140
122. वहीं, पृ. – 170

123. वहीं, पृ. - 52
124. वहीं, पृ. - 278
125. वहीं, पृ. – 62
126. वहीं, पृ. - 70
127. रवीन्द्र रचनावली (खंड - 14), रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 196
128. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ.-106
129. वहीं, पृ. - 150
130. वहीं, पृ. – 164
131. वहीं, पृ. - 124
132. वहीं, पृ. - 128
133. वहीं, पृ. - 142
134. वहीं, पृ. - 50
135. वहीं, पृ. - 44
136. वहीं,पृ. – 342
137. वहीं, पृ. – 182
138. रवीन्द्र रचनावली, चतुर्दश खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1421 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 195
139. वहीं, पृ. – 189
140. रवीन्द्र रचनावली, एकादश खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 549 (आलेख - छन्द)
141. रवीन्द्र रचनावली, द्वितीय खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, पृ. - 51
142. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ.-232

143. वहीं, पृ. – 32
144. वहीं, पृ. - 336
145. रवीन्द्र रचनावली (खण्ड - 6), रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1417 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 61
146. वहीं, पृ. – 83
147. वहीं, पृ. – 38
148. रवीन्द्र रचनावली, चतुर्दश खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1421 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 180 (साहित्येर स्वरूप)
149. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 57
150. वहीं, पृ. – 2
151. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ.-150
152. वहीं, पृ. – 100
153. वहीं, पृ. - 104
154. वहीं, पृ. - 116
155. वहीं, पृ. - 188
156. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, दिसम्बर - 2019, पृ. - 65
157. वहीं, पृ. – 89
158. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ. - 50
159. वहीं, पृ. – 160
160. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 64

161. वहीं, पृ. – 56
162. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ. - 68
163. वहीं, पृ. – 79
164. यामा, महादेवी वर्मा, पृ. 18
165. वहीं, पृ. - 21
166. वहीं, पृ. - 21
167. वहीं, पृ. - 48
168. वहीं, पृ. - 73
169. वहीं, पृ. - 81
170. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ. 36
171. वहीं, पृ. – 28
172. वहीं, पृ. - 68
173. वहीं, पृ. - 302
174. वहीं, पृ. - 48
175. वहीं, पृ. - 358
176. वहीं, पृ. - 28
177. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 1
178. वहीं, पृ. - 9
179. वहीं, पृ. - 27
180. वहीं, पृ. - 30
181. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ.-23
182. वहीं, पृ. - 156

183. वहीं, पृ. - 142

184. वहीं, पृ. - 142

185. वहीं, पृ. - 140

186. वहीं, पृ. - 294

187. यामा, महादेवी वर्मा, पृ. - 30

188. वहीं, पृ. - 60

189. वहीं, पृ. - 66

190. वहीं, पृ. - 66

191. वहीं, पृ. - 83

192. वहीं, पृ. - 102

193. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ. 40

194. वहीं, पृ. - 48

195. वहीं, पृ. - 78

196. वहीं, पृ. - 124

197. वहीं, पृ. - 58

198. वहीं, पृ. - 284

199. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 55 -56

200. वहीं, पृ. - 29

201. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ. - 55

202. वहीं, पृ. - 27

203. वहीं, पृ. - 38

204. यामा, महादेवी वर्मा, पृ. - 57

205. वहीं, पृ. - 62

206. वहीं, पृ. - 79
207. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ. - 124
208. वहीं, पृ. - 1
209. वहीं, पृ. - 32
210. वहीं, पृ. - 6
211. वहीं, पृ. - 11
212. वहीं, पृ. - 37
213. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 90
214. वहीं, पृ. – 90
215. वहीं, पृ. - 53
216. वहीं, पृ. – 4
217. वहीं, पृ. - 7
218. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, दिसम्बर - 2010, पृ. - 60
219. वहीं, पृ. - 13
220. वहीं, पृ. - 13
221. वहीं, पृ. - 12
222. वहीं, पृ. - 27
223. यामा, महादेवी वर्मा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, छठा पेपरबैक संस्करण - 2019, पृ. - 92
224. रवीन्द्रनाथ ठाकुर, गीतांजलि, अनुवादक - रामेश्वर मिश्र, पृ. - 128
225. यामा, महादेवी वर्मा, पृ. - (भूमिका)

226. रवीन्द्र रचनावली, चतुर्दश खण्ड, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, विश्वभारती ग्रंथम विभाग, कोलकाता, बंगाब्द - 1421 (पुनर्मुद्रण), पृ. - 182 (साहित्येर यात्रा)
227. यामा , महादेवी वर्मा , पृ. - 55
228. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , पृ. - 36
229. यामा , महादेवी वर्मा , पृ. - 53
230. वहीं , पृ. - 93
231. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , पृ. - 276
232. वहीं , पृ. - 284
233. वहीं , पृ. - 68
234. वहीं , पृ. - 278
235. वहीँ , पृ. - 140
236. यामा , महादेवी वर्मा , लोकभारती प्रकाशन , इलाहाबाद , छठा पेपरबैक संस्करण - 2019 , पृ. - 46
237. वहीं ,पृ. - 64
238. वहीं , पृ. - 55
239. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , विश्वभारती ग्रंथम विभाग , कोलकाता , दिसम्बर - 2010 , पृ. - 158
240. वहीं , पृ. - 104
241. वहीं , पृ. - 152
242. यामा , महादेवी वर्मा , पृ. - 05
243. वहीं , पृ. - 02
244. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , पृ. - 174

245. वहीं , पृ.- 154
246. वहीं , पृ.- 82
247. वहीं , पृ. - 212
248. यामा , महादेवी वर्मा , लोकभारती प्रकाशन , इलाहाबाद , छठा पेपरबैक संस्करण - 2019 , पृ. - 63
249. वहीं , पृ. - 90
250. वहीं , पृ. - 97
251. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , विश्वभारती ग्रंथम विभाग , कोलकाता , दिसम्बर - 2010 , पृ.-40
252. वहीं , पृ. - 46
253. यामा , महादेवी वर्मा , पृ.- 81
254. रवीन्द्रनाथ ठाकुर , गीतांजलि , अनुवादक - रामेश्वर मिश्र , पृ. - 92
255. यामा , महादेवी वर्मा , पृ.- 6
256. रवीन्द्रनाथ की कविताएँ, साहित्य अकादेमी, 1782, पृ0-21